RNI No. : UPHIN-2009/29369

डाक पंजीकरण : MISC-II/CPM/04/KPHO/2017-19
प्रधान डाकघर कानपुर–डाक प्रेषण दिनांक 29/30

वार्षिक सदस्यता शुल्क 100/–

द्रविड़ भारत

www.dbindia.org.in

सामाजिक परिवर्तन का मासिक पत्र

नवम्बर–2017 | वर्ष – 09 | अंक : 10 | मूल्य : 5/–

सम्पादकीय

RNI No. : UPHIN-2009/29369

संपादक : उमेश्वरी देवी, मो.: 9005204074
संरक्षक मण्डल : मा. रामदीन अहिरवार (महोबा), मा. राम अवतार चौधरी (इं. जल संस्थान), मा. छविलाल वर्मा (चरखारी), मा. हरिनाथ राम (दिल्ली), मनीष कुमार मो. 9415053621
राज्य ब्यूरो प्रमुख उत्तर प्रदेश : सुनीता धीमान, 414/12, शास्त्री नगर, कानपुर (उ.प्र.), मो. : 9450871741
क्षेत्रीय सम्पादकीय कार्यालय :
40/69, डी–5, श्यामलाल का हाता, परेड, कानपुर (उ.प्र.), मो. : 8756157631
ब्यूरो प्रमुख कानपुर मण्डल :
पुष्पेन्द्र गौतम हिन्दुस्तानी, मल्हौसी, औरेया, उ.प्र. मो.: 9456207206
हरियाणा राज्य :
डा. रमेश रंगा, ग्राम–सराय, औरंगाबाद, पो.–बहादुरगढ़,जिला–झज्जर (हरियाणा),09416347052
कानूनी सलाहकार : एड. रामप्रकाश अहिरवार, एड. यू.के. यादव, मोती लाल वर्मा, एड. विजय बहादुर सिंह राजपूत, एड. रमाकान्त धुरिया, रामऔतार वर्मा, एड. सुशील कुमार, कानपुर
मध्य प्रदेश राज्य : पुष्पेन्द्र कुमार
कार्यालय : ग्रा. व पो.–रामटौरिया, जिला–छतरपुर
छत्तीसगढ़ राज्य :
दिलीप कुमार कोसले, मो. : 09424168170
दिल्ली प्रदेश : C/o अनिल कुमार कनौजिया C-260, हर्ष विहार, हरिनगर एक्सटेंशन पार्ट–III, बदरपुर, नई दिल्ली–44, मो. : 09540552317
राजस्थान राज्य : रघुनाथ बौद्ध, श्याम रघु फुट वियर, दुकान नं.–1, गणेश मार्केट, पुलिस चौकी के सामने, अलवर, जिला–अलवर–301001, मो. : 09887512360, 0144–3201516
चिरंजीलाल बैरवा (व्यावस्थापक) मेहरा आदर्श विद्या मन्दिर, भीम नगर कालोनी, राज भट्टा, दिल्ली रोड, अलवर, जिला–अलवर, मो.–09829855349
बाबूलाल बौद्ध, अलवर, मो.–08058198233
संपादकीय/विज्ञापन प्रसार/पंजीकृत कार्यालय :
ग्रा व पो.–रिवई (सुनैचा), जिला–महोबा (उ.प्र.)
मो. : 9005204074, 8756157631
E-mail : dravinbharat1@gmail.com
प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वामी
उमेश्वरी देवी द्वारा ग्रा. व पो.–रिवई (सुनैचा), जिला महोबा से प्रकाशित व श्रेय ऑफसेट प्रा. लि., 109/406, नेहरू नगर, कानपुर, 84/1, बी, फजलगंज, कानपुर से मुद्रित

प्रकाशित पत्रिका में प्रकाशित लेख, सामग्री, में संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। इसमें किसी भी प्रकार का दावा या विचार मान्य नहीं होगा। लेख के विवादित होने पर लेखक ही उत्तरदायी होगा समस्त विवादों का निपटारा महोबा न्यायालय में होगा पत्रिका का संपादन एवं संचालन पूर्णतयः अवैतनिक एवं अव्यवसायिक है।

मिशन को बढ़ाने के लिए सहयोग करें –
भारतीय स्टेट बैंक, शाखा–नवीन मार्केट, कानपुर
खाता सं.–33496621020 • IFSC CODE-SBIN005307

अस्पृश्यता–उसका स्त्रोत

ऐसे लोगों की कमी नहीं है जो अस्पृश्यों की दयनीय स्थिति से दुखी हो यह चिल्लाकर अपना जी हल्का करते फिरते हैं कि हमें अस्पृश्यों के लिए कुछ करना चाहिए। लेकिन इस समस्या को जो लोग हल करना चाहते हैं, उनमें से शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति हो जो यह कहता हो कि 'हमें स्पृश्य हिंदुओं को बदलने के लिए भी कुछ करना चाहिए।' यह धारणा बनी हुई है कि अगर किसी का सुधार होना है तो वह अस्पृश्यों का ही होना है। अगर कुछ किया जाना है तो वह अस्पृश्यों के प्रति किया जाना है और अगर अस्पृश्यों को सुधार दिया जाए, तब अस्पृश्यता की भावना मिट जाएगी। सवर्णों के बारे में कुछ भी नहीं किया जाना है। उनकी भावनाएं, आचार–विचार और आदर्श उच्च हैं। वे पूर्ण हैं, उनमें कहीं भी कोई खोट नहीं है। क्या यह धारणा उचित है? यह धारणा उचित हो या अनुचित, लेकिन हिंदू इसमें कोई परिवर्तन नहीं चाहते? उन्हें इस धारणा का सबसे बड़ा लाभ यह है कि वे इस बात से आश्वस्त हैं कि वे अस्पृश्यों की समस्या के लिए बिल्कुल भी उत्तरदायी नहीं है।

यह मनोवृत्ति कितनी स्वभाव अनुरूप है, इसे यहूदियों के प्रति ईसाइयों की मनोवृत्ति का उदाहरण देकर स्पष्ट किया जा सकता है। हिंदुओं की तरह ईसाई भी यह नहीं मानते कि यहूदियों की समस्या असल में ईसाइयों की समस्या है। इस विषय पर लुइस गोल्डिंग की टिप्पणी इस स्थिति को और अधिक स्पष्ट करती है। यहूदियों की समस्या असलियत में किस तरह ईसाइयों की समस्या है, इसे बताते हुए वह कहते हैं :

''जिस अर्थ में मैं यहूदियों की समस्या को असलियत में ईसाई समस्या समझता हूं, उसको स्पष्ट करने के लिए बहुत ही सीधी–सी मिसाल देता हूं। मेरे ध्यान में मिश्रित जाति का एक आयरिश शिकारी कुत्ता आ रहा है। इसे मैं बहुत दिनों से देखता आया हूं। यह मेरे दोस्त जॉन स्मिथ का कुत्ता है, नाम है पैडी। वह इसे बेहद प्यार करते हैं। पैडी को स्कॉच शिकारी कुत्ते नापसंद हैं। इस जाति का कोई कुत्ता उसके आस–पास बीस गज दूर से भी नहीं निकल सकता और कोई दिख भी जाता है तो वह भूंक–भूंककर आसमान सिर पर उठा लेता है। उसकी यह बात जॉन स्मिथ को बेहद बुरी लगती है और वह उसे चुप करने का हर संभव प्रयत्न भी करते हैं, क्योंकि पैडी जिन कुत्तों से नफरत करता है, वे बेचारे चुपचाप रहते हैं, और कभी भी पहले नहीं भूंकते। मेरा दोस्त, हालांकि पैडी को बहुत प्यार करता है, तो भी वह यह सोचता है, और जैसा कि मैं भी सोचता हूं, कि पैडी की यह आदत बहुत कुछ उसके किसी जाति–विशेष होने पर उसके स्वभाव के कारण है। हमसे किसी ने यह नहीं कहा कि यहां जो समस्या है, वह स्कॉच शिकारी कुत्ते की समस्या है और जब पैडी अपने पास के किसी कुत्ते पर झपटता है जो बेचारा टट्टी–पेशाब वगैरह के लिए जमीन सूंघ–सांघ रहा होता है, तब उसे कुत्ते को क्या इसलिए मारना–पीटना चाहिए कि वह वहां अपने अस्तित्व के कारण पैडी को हमला करने के लिए उकसा देता है।

हम देखते हैं कि यहूदी समस्या और अस्पृश्यों की समस्या एक जैसी है। स्कॉच शिकारी कुत्ते के लिए जैसा पैडी है, यहूदियों के लिए वैसा कोई ईसाई है और वैसा ही अस्पृश्यों के लिए कोई हिंदू है। किंतु एक बात में यहूदियों की समस्या और ईसाई समस्या एक–दूसरे की विरोधी हैं। यहूदी और ईसाई अपनी प्रजाति के एक–दूसरे के शत्रु होने के कारण एक–दूसरे से अलग कर दिए गए हैं। यहूदी प्रजाति ईसाई प्रजाति के विरूद्ध है। हिंदू और अस्पृश्य इस प्रकार की शत्रुता के कारण एक–दूसरे से अलग नहीं हैं। उनकी एक ही प्रजाति है और उनके एक जैसे रीति–रिवाज हैं।

दूसरी बात यह है कि यहूदी, ईसाइयों से अलग–अलग रहना चाहते हैं। इन दो तथ्यों में से पहले तथ्य अर्थात यहूदियों और ईसाइयों में वैर–भाव का आधार यहूदियों की अपनी प्रजाति के प्रति कट्टर भावना है और दूसरा तथ्य ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित लगता है। प्राचीन–काल में ईसाइयों ने यहूदियों को अपने साथ मिलाने के कई प्रयत्न किए, लेकिन यहूदियों ने इसका सदा प्रतिरोध किया। इस संबंध में दो घटनाएं उल्लेखनीय हैं–

पहली घटना नेपोलियन के शासन–काल की है। जब फ्रांस की राष्ट्रीय असेम्बली इस बात के लिए सहमत हो गई कि यहूदियों के लिए 'मानव के अधिकार' घोषित किए जाएं, तब अलसाके के व्यापारी संघ और प्रतिक्रियावादी पुरोहितों ने यहूदी प्रश्न को फिर उठाया। इस पर नेपोलियन ने इस प्रश्न को यहूदियों को उनके द्वारा ही विचार करने के लिए सौंपने का निर्णय किया। उसने फ्रांस, जर्मनी और इटली के प्रमुख यहूदी नेताओं का एक सम्मेलन बुलाया ताकि इस बात पर विचार किया जा सके कि क्या यहूदी धर्म के सिद्धांत, नागरिकता प्राप्त करने के लिए आवश्यक शर्तों के अनुरूप हैं अथवा नहीं।

नेपोलियन यहूदियों को बहुसंख्यकों के साथ मिला देना चाहता था। इस सम्मेलन में एक सौ ग्यारह प्रतिनिधियों ने भाग लिया। यह सम्मेलन 25 जुलाई 1806 को पेरिस के टाउन हाल में हुआ, जिसमें बारह प्रश्न विचारार्थ रखे गए थे। ये प्रश्न मुख्य रूप से यहूदियों में देश–भक्ति की भावना, यहूदियों और गैर–यहूदियों के बीच विवाह होने की संभावना और इसकी कानूनी मान्यता से संबंधित थे। सम्मेलन में जो घोषणा की गई, उससे नेपालियन इतना प्रसन्न हुआ कि उसने येरूस्लम की प्राचीन परिषद के आधार पर यहूदियों की एक सर्वोच्च न्याय परिषद् (सैनहेड्रिन) का आयोजन किया। उसने इसे विधान सभा का कानूनी दर्जा देना चाहा। इसमें फ्रांस, जर्मनी, हालैंड और इटली के इकहत्तर प्रतिनिधि शामिल हुए। इसकी अध्यक्षता स्ट्रासबर्ग के रब्बी सिनजेइम ने की। इसकी बैठक 9 फरवरी 1807 को हुई और इसमें एक घोषणा–पत्र स्वीकार किया गया, जिसमें इस बात के लिए सभी यहूदियों का आवाह्न किया गया कि वे फ्रांस को अपने पूवजों का निवास मान लें, इस देश के सभी निवासियों को अपना भाई समझें और यहां की भाषा बोलें। इसमें यहूदियों और ईसाइयों के बीच विवाह–संबंध उदार भाव से ग्रहण करने का भी अनुरोध किया गया, लेकिन इस घोषणा–पत्र में यह भी कहा गया कि ये विवाह–संबंध यहूदियों की धार्मिक महासभा द्वारा नहीं स्वीकृत किए जा सके। यहां यह उल्लेखनीय है कि यहूदियों ने अपने गैर–यहूदियों के साथ विवाह–संबंध होने की स्वीकृति नहीं दी। उन्होंने इन संबंधों के विरूद्ध कुछ भी कार्रवाई न करने के बारे में सहमति मात्र दी थी।

दूसरी घटना तब की है, जब बटाविया गणराज्य की स्थापना 1795 में हुई थी। इसमें यहूदी संप्रदाय के अति–उत्साही सदस्यों ने इस बात पर दबाव डाला कि उन ढेर सारे प्रतिबंधों को समाप्त किया जाए, जिनसे यहूदी पीड़ित हैं। किंतु प्रगतिशील यहूदियों ने नागरिकता के पूर्ण अधिकार की जो मांग की थी, उसका एम्सटर्डम में रहने वाले यहूदियों के नेताओं ने पहले तो विरोध किया जो काफी आश्चर्य की बात थी। उनको आशंका थी कि नागरिक समानता होने से यहूदी धर्म की सुरक्षा खतरे में पड़ जाएगी, और उन्होंने घोषणा की कि उनके सहधर्मी अपने नागरिक होने के अधिकार का परित्याग करते हैं, क्योंकि इससे उनके धर्म के निर्देशों के अनुपालन में बाधा पहुंचती है। इससे स्पष्ट है कि वहां के यहूदियों ने उस गणराज्य के सामान्य नागरिक के रूप में रहने की अपेक्षा विदेशी के रूप में रहना अधिक पसंद किया था।

ईसाइयों के स्पष्टीकरण का चाहे जो भी अर्थ समझा जाए, इतना तो स्पष्ट है कि उन्हें कम से कम इस बात का तो एहसास रहा है कि उनका यह प्रमाणित करना एक दायित्व है कि यहूदियों के प्रति उनका व्यवहार गैर–मानवीय नहीं रहा है। परंतु हिंदुओं ने अस्पृश्यों के साथ अपने व्यवहार के औचित्य को प्रमाणित करने की बात तो कभी सोची ही नहीं। हिंदुओं का दायित्व तो बहुत बड़ा है, क्योंकि उनके पास कोई वास्तविक कारण है ही नहीं, जिसके अनुसार वे अस्पृश्या को उचित ठहरा सकें। वे यह नहीं कह सकते कि कोई व्यक्ति समाज में इसलिए अस्पृश्य है, क्योंकि वह कोढ़ी है या वह घिनौना लगता है। वे यह भी नहीं कह सकते कि उनके और अस्पृश्यों के बीच में कोई धार्मिक वैर है, जिसकी खाई को पाटा नहीं जा सकता। वे यह तर्क भी नहीं दे सकते कि अस्पृश्य स्वयं हिंदुओं में घुलना–मिलना नहीं चाहते।

लेकिन अस्पृश्यों के संबंध में ऐसी बात नहीं है। वे अर्थ में अनादि हैं और शेष से विभक्त हैं। लेकिन यह पृथकता, उनका पृथग्वास उनकी इच्छा का परिणाम नहीं है। उनको इसलिए दंडित नहीं किया जाता कि वे घुलना–मिलना नहीं चाहते। उन्हें इसलिए दंडित किया जाता है कि वे हिंदुओं में घुल–मिल जाना चाहते हैं। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि हालांकि यहूदियों और अस्पृश्यों की समस्या एक जैसी है क्योंकि यह समस्या दूसरों की पैदा की हुई है, तो भी वह मूलतः भिन्न है। यहूदी की समस्या स्वेच्छा से अलग रहने की है। अस्पृश्यों की समस्या यह है कि उन्हें अनिवार्य रूप से अलग कर दिया गया है। अस्पृश्यता एक मजबूरी है, पसंद नहीं।

साभार – बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर
सम्पूर्ण वाङ्मय खण्ड–9
(पृ.सं. 17 से 20 तक)

भारत में महिला विकास की सच्चाई

महिला विकास एवं उनके अधिकारों के संदर्भ में हमने कानून एवं सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं को विस्तार से देखा। परंतु आज महिला अधिकारों की सुरक्षा कितनी हो रही है। महिलाएं कितनी सुरक्षित एवं संरक्षित है इसका सच भी हमें समाज में दिखाई पड़ रहा है। अभी पिछले दिनों दिल्ली में दामिनी रेप एंड मर्डर केस में हमने देखा कि सरकारें कितनी असम्वेदनशील हो गई है। उसका ज्यादा जोर अपराधियों को सजा दिलाने में नहीं सजा दिलाने की मांग कर रहे लोगों को दबा देने में था। समाज और सरकार की यह असम्वेदनशीलता कितनी घातक होगी यह तो भविष्य ही जानता है। फिलहाल यह मामला कोर्ट में है और प्रतीक्षा है अपराधियों को सजा मिलने की।

महिलाओं के कल्याण के लिए गणित अधिकांश योजनाएं कागज में चल रही हैं। कानूनों का पालन नहीं हो पा रहा है। न्याय के लिए पता नहीं कितने पापड़ बेलने पड़ते हैं, फिर भी न्याय यदि मिलता भी है तो तब मिलता है जब एक जिंदगी बीत जाती है। सरकारें कानून बनाकर अपने कर्त्तव्य की इतिश्री कर लेती हैं। समाज निर्लिप्त भाव से देखता रहता है। यदि कुछेक मामलों में आंदोलन होते भी है तो वे या तो सरकार द्वारा दबा दिए जाते हैं अथवा अपनी मौत स्वयं मर जाते हैं। गांवों के महिलाओं की हालत तो और भी बुरी है, उनके लिए जैसे कोई कानून ही नहीं। कहां जाएं, किससे शिकायत करें। ऐसे में हमें देखना ही होगा कि महिला अधिकारों का वास्तविक सच क्या है। मैं घर से बाहर ही नहीं, बल्कि घर के भीतर भी प्रायः महिला विकास, महिला सशक्तिकरण व महिला अधिकारों की बातें करता रहता हूं। मेरी पत्नी ने एक दिन प्रश्न किया– ''आप इतनी लंबी चौड़ी बातें करते हो, मैं आज आपसे पूछती हूं कि भारत में महिला विकास की सच्चाई क्या है? हां, मैं असली तस्वीर देखना चाहती हूं, नकली मत दिखाना।''

मैं आश्चर्य से पूछा– ''तुम्हें क्या लगता है क्या भारत में महिला विकास नहीं हो रहा?''

वह कहने लगी– ''हो रहा होगा, लेकिन धरातल पर होता दिखाई नहीं दे रहा।'' मैं सन्न रह गया। कहने लगा– ''समूचे विश्व में महिलाओं की स्थिति में तेजी से परिवर्तन हो रहा है, भारत भी इससे अछूता नहीं है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में महिलाएं बढ़–चढ़कर हिस्सा ले रही हैं और सफल भी हो रही हैं। बात चाहे राजनीति की हो, व्यवसाय की हो, मीडिया की हो, उद्योग की हो, इंजीनियरिंग की हो, चिकित्सा की हो, अंतरिक्ष की हो या वैज्ञानिक शोध की। जीवन का कोई भी तो ऐसा क्षेत्र नहीं बचा, जिसमें महिलाओं ने प्रभावी उपस्थिति दर्ज न करवा दी हो।''

वह मेरी बात से संतुष्ट नहीं हुई। उसने कहा–''यह सच तो है, लेकिन पूरा सच नहीं है। यह तस्वीर का उजला पक्ष है और वह भी छोटा–सा। केवल इस आधार पर कि महानगरों और बड़े शहरों में महिलाएं अपनी प्रभावी उपस्थिति दर्ज करवा रही है, हम यह निष्कर्ष नहीं निकाल सकते कि महिलाओं की सामाजिक व आर्थिक स्थिति सुधर गई है और वे विकसित हो गई है।''

मैंने बहस करनी चाही तो वह मुझे रोककर बोली–''स्त्रियों की सही दशा देखनी है तो गांवों में जाओ, मलिन बस्तियों में जाओ, मध्यम दर्जे के परिवारों में जाओ। असली भारत यहीं रहता है। मुंबई, दिल्ली, कोलकाता, चेन्नई और बैंगलोर आदि की महिलाएं सारे भारत का प्रतिनिधित्व नहीं करती। देश की तीन चौथाई आबादी गांवों में रहती है तो तीन चौथाई महिलाएं भी गांवों में ही रहती हैं। उनमें से शायद ही कोई अखबार पढ़ती होगी। शायद ही किसी को सरकारी योजनाओं का ज्ञान होगा। ज्यादातर को तो पशुओं का गोबर उठाने, बच्चे पालने और खेतों में काम करने के अलावा कुछ सूझता ही नहीं।''

मैंने बहस में हारना ठीक नहीं समझा, इसलिए कहने लगा–''माता–पिता की सम्पत्ति में बेटियों को बेटों के समान हिस्सा मिलने लगा है। क्योंकि नाबालिग विवाहित लड़कियां समाज में ज्यादा योगदान नहीं दे सकतीं, इसलिए उनकी शादी की उम्र 18 साल कर दी गई है। महिला उत्पीड़न के मामले रोकने के लिए कानूनों में व्यापक संशोधन किए गए हैं। दहेज लेने व देने को अपराध माना गया है। महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए इतनी योजनाएं चलाई गई हैं।''

वह भी बहस में कहां हारने वाली थी। उसने कहा–''क्या तुम इतना भी नहीं जानते कि विकास की कुछ शर्तें होती हैं। पहली शर्त होती है शिक्षा। भारत में साक्षरता की दर उतनी तेजी से नहीं बढ़ पा रही, जितनी बढ़नी चाहिए। लगभग एक तिहाई महिलाओं के लिए आज भी काला अक्षर भैंस बराबर है। दूसरी शर्त होती है लिंगानुपात, जिसका दिवाला पिटा पड़ा है। सरकारें लाख कोशिश करके भी कन्या भ्रूण हत्या पर रोक नहीं लगा पा रहीं। लाखों लड़कियों को आज भी जन्म से पहले मार डाला जाता है। मैं तुम्हें बताना चाहूंगी कि अधिकांश विकसित देश में लिंगानुपात बराबर होने में बरसों लग जाएंगे। शर्म की बात तो यह है कि जो भारत के विकसित राज्य हैं, जैसे पंजाब व हरियाणा, इनमें लिंगानुपात की हालत ज्यादा चिंतनीय है।

तीसरी शर्त होती है सामाजिक सुरक्षा। राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो के आंकड़े इस बात की पुष्टि करते हैं कि कामकाजी महिलाओं को ज्यादा शोषण का शिकार होना पड़ता है। महिलाओं के खिलाफ अपराध के आंकड़े लगातार बढ़ते चले जा रहे हैं। परिवार में भी महिलाएं सुरक्षित नहीं हैं। अस्मिता नामक एक गैर सरकारी संगठन ने एक शोध करवाया है, जिसके अनुसार तेरह प्रतिशत से अधिक महिलाएं पति द्वारा पीटी जाती हैं और जिनके साथ हाथापाई की जाती है। मुझे तो यह लगता है कि चाहे सब कुछ बदल चुका हो, लेकिन पुरूषों का मानसिक स्तर आज भी वैसा ही है, जैसा 300–400 साल पहले था। उत्पीड़न से परेशान महिलाओं की

आत्महत्याओं का ग्राफ लगातार बढ़ता जा रहा है। मैं तो कहती हूं कि कोख से लेकर कब्र तक महिलाएं असुरक्षित हैं। अगर मैं राजनीति की बात करूं तो बेशक महिलाओं को पंचायत स्तर पर 33 प्रतिशत आरक्षण दे दिया गया है। लेकिन सच्चाई देखो जरा, कुछ महिलाओं का जिक्र छोड़ दिया जाए तो शेष डमी है। उनके पति या परिवार के सदस्य ही सभी निर्णय लेते हैं। वे तो केवल कठपुलियों की तरह केवल स्टांप बन हुई हैं। जनाब, चौथी शर्त होती है, व्यक्तिगत स्वतंत्रता। गांवों में महिलाएं आज भी सुबह तीन–चार बजे उठ जाती हैं। पशुओं को चारा–पानी देती है, दूध निकालती है फिर घर का काम–काज निपटाकर खेतों में जाती है। शाम को घर लौटती हैं तो फिर पशुओं को चारा खिलाना, दूध निकालना और भोजन की व्यवस्था का सिलसिला शुरू हो जाता है। मैं पूछती हूं कि गांव की औरत, जो हर वक्त काम में जुटी रहती है, उसे कामकाजी क्योंन नहीं माना जाता? उन्हें उनके काम की प्रशंसा तो दूर, लताड़ जरूर मिल जाती है। वे गुलामों की तरह जीवन जी रही हैं। पांचवी शर्त होती है स्वास्थ्य सेवाएं। आज देश की साठ प्रतिशत एनीमिया की समस्या से जूझ रही हैं। हर साल देश में 15 लाख लड़कियों का जन्म होता है और उनमें से एक चौथाई अपना पंद्रहवां जन्मदिन देखने से पहले ही मौत का शिकार हो जाती हैं। देश की हर पाचवीं महिला किसी न किसी गंभीर रोग से पीड़ित हैं। और साहब जी, छठी शर्त होती है काम करने की आजादी। आप खुद ही बता दीजिए, महिलाओं को क्या काम करने की आजादी है। आज भी अगर वे नौकरी की बातें करती हैं या बिजनेस की तो ज्यादातर घरों में उनका मजाक उड़ाया जाता है। आज भी ज्यादातर महिलाओं को वही करना पड़ता है जो उनके पति या परिवार के सदस्य चाहते हैं। और मैं समझती हं कि सातवीं शर्त होती है अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता। यह तो जैसे उनसे पूरी तरह ही छीन ली गई है। घर के, परिवार के या बाहर के, किसी भी मामले में उनकी प्रायः सलाह तक नहीं ली जाती। फैसले लेना आज भी मर्दों का पुश्तैनी अधिकार समझा जाता है।

फिर इससे पहले कि पत्नी का लंबा–चौड़ा भाषण और आगे बढ़ता, मैंने उसे टोक दिया और कहा–''तुम नैगेटिव सोच रही हो। कुछ पॉजीटिव भी तो सोचो। क्या तुम्हें कहीं भी नहीं लगता कि देश की महिलाएं वास्तव में सशक्त होकर उभर रही हैं।''

उसके चेहरे के भाव बदले। कहने लगी– ''मुझे उस दिन बहुत खुशी हुई थी, जब श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटिल देश की राष्ट्रपति बनी थीं। तब मुझे लगा था कि देश की महिलाएं अगर चाहें तो पुरूषों को हर क्षेत्र में टक्कर दे सकती हैं।''

मैंने तत्काल बातचीत का विषय बदल दिया और पूछा–''तुम क्या मानती हो, महिलाओं का सशक्तिकरण पूरी गति से क्यों नहीं हो पा रहा?'' उसने फौरन जवाब दिया–''मैं समझती हूं कि अभी तक देश की महिलाओं को अपने अधिकारों और कानून का ज्ञान नहीं है। पढ़ी–लिखी महिलाएं भी इस संबंध में प्रायः कुछ नहीं जानतीं और जानने की कोशिश भी नहीं कर रहीं। एक तो अशिक्षा उनके आड़े आ रही है और दूसरा मन में छिपा डर। अगर महिलाएं शिक्षित होकर अपने पैरों पर खड़ी हो जाएंगी तथा मन से हर तरह का डर निकाल देंगी, तब सही मायनों में उनका सशक्तिकरण हो जाएगा। इससे पहले बिल्कुल नहीं।''

मैं उसकी इन बातों से पूरी तरह सहमत था। फिर कोई बहस न हुई। दोनों अपने–अपने कामों में लग गए। मैं कहना चाहता हूं कि यह सच्चाई है। सबसे पहले महिलाओं को शिक्षित होना होगा। अपने अधिकारों और कानून के बारे में पूरी जानकारी एकत्रित करनी होगी। आर्थिक रूप से सुदृढ़ होने के लिए अपने पैरों पर खड़ा होना पड़ेगा। और इससे भी बड़ी बात यह है कि भीतर छिपे डर को बाहर निकालना होगा। डर ऐसे ही नहीं निकलेगा, जब तक कि शारीरिक रूप से इतना सक्षम नहीं हुआ जाता कि असामाजिक तत्वों से निपटा जा सके।

मेरा सुझाव है कि महिलाएं सबसे पहले स्वयं को अबला समझना छोड़ दें और स्वयं को वास्तव में दुर्गा या काली समझ लें। वे ऐसा प्रशिक्षण जीवन में अवश्य लें कि वक्त पड़ने पर अपनी सुरक्षा आप कर सकें। इसके अलावा अगर किसी लड़की या महिला के खिलाफ कोई अपराध होता है तो अन्य महिलाओं को खामोश नहीं रहना चाहिए। वे पीड़ित महिला का अवश्य साथ दें। जब तक असामाजिक तत्वों व अहंकार से भरे पुरूषों से टक्कर नहीं ली जाएगी, महिलाओं का सशक्तिकरण हो ही नहीं सकता।

एक खास सुझाव

मेरी एक महिला मित्र सौम्या चतुर्वेदी का एक और सुझाव है। वे कहती है–'अपनी बच्चियों को माता–पिता या अभिभावक ही काफी हद तक कमजोर बनाते हैं। उन्हें चाहिए कि वे अपनी बच्चियों को मजबूत बनाएं। उन्हें अधिक से अधिक पढ़ाएं–लिखाएं तथा आत्म सुरक्षा के लिए ट्रेनिग दिलवाएं। साथ ही उन्होने यह भी कहा है कि एक पिता अपनी बेटी की शादी पर लाखों रूपए खर्च कर देता है, फिर भी वह ससुराल में प्रताड़ना झेलती है। क्यों न यही पैसा बच्ची के सम्पूर्ण विकास पर खर्च किया जाए। उसे कहीं अच्छी जगह नौकरी लगवाया जाए या कोई बिजनेस खोलकर दिया जाए। इससे वह दहेज का दंश नहीं झेलेगी तथा प्रताड़ना का शिकार नहीं होगी।

मुझे हमेशा लगता है कि महिला सशक्तिकरण एक गंभीर विषय है। इसकी गहराइयों में जाना होगा। इस बात को निश्चित मान लीजिए कि जब तक कन्या भ्रूण हत्या, दहेज, घरेलू उत्पीड़न, आर्थिक कमजोरी और असुरक्षा किसी महिला को घेरे रहेंगे, तब तक उसका सशक्तिकरण कोसों दूर रहेगा।

साभार
महिलाएं समझे अपने कानूनी अधिकार
(पृ.सं. 176 से 179 तक)
जे.के.वर्मा

आजादी के बाद महिलाओं की वैधानिक स्थिति

स्वाधीन भारत में देश की इस आधी आबादी के संदर्भ में गहनता से विचार–विमर्श शुरू हुआ। हालांकि परम्परावादी अवरोध भी कम नहीं थे। स्त्रियों को पुरुषों के समान अधिकार मिले, इस सम्बंध में कुछ मुद्दों पर आम सहमति थी तो कुछ मुद्दों पर मतभेद भी। इसलिए इस सम्बंध में कानून उतनी तीव्रता के साथ नहीं बन पाए जितनी तीव्रता अपेक्षित थी, परंतु फिर भी खंडों में ही सही नारी को पुरुषों के समान वैधानिक अधिकार दिलाने के प्रयास जारी रहे और परिणाम स्वरूप स्त्रियों की परिस्थितियां भी बदलीं। उनकी बदहाली में कमी भी आई। स्त्रियों को विवाह, सम्पत्ति, संरक्षकता एवं विवाह–विच्छेद के क्षेत्र में पुरुषों के समान अधिकार मिलने लगे तथा सामाजिक रूढ़ियों और कुरीतियों से उन्हें छुटकारा पाने का अवसर मिला। ऐसे अधिनियमों में मुख्य इस प्रकार से हैं, जिनसे स्त्री की दिशा और दशा बदली।

पहला हिंदू विवाह अधिनियम–1955 और महिला

इसमें सबसे पहले हिंदू की परिभाषा समझाई गई। बताया गया कि हिंदू कौन हैं। आइए, हम भी इस अधिनियम को समझने का प्रयास करें और जानें कि इसमें हिंदू किसे बताया गया और उनके क्या प्रावधान किए गए।

– हिन्दू चाहे वे किसी भी जाति या सम्प्रदाय के हों। बौद्ध, जैन या सिक्ख।

– कोई भी ऐसा व्यक्ति जिसने अपना मूल धर्म छोड़कर हिन्दू धर्म अपनाया हो।

– आमतौर पर अनुसूचित जनजातियों पर यह कानून लागू नहीं होगा।

– हिन्दू विवाह वर और कन्या के समाज में प्रचलित रस्मो–रिवाज के मुताबिक होना चाहिए।

– आमतौर से हिन्दू विवाह होम, यज्ञ, हवन इत्यादि से और सप्तपदी द्वारा होता है।

– हिन्दू विवाह के लिए वर और कन्या दोनों का हिन्दू होना जरूरी है।

– वर और कन्या दोनों की पहले शादी नहीं हुई होनी चाहिए। इसका अर्थ यह है कि विवाह के समय वर की कोई जीवित पत्नी या वधू का जीवित पति नहीं होना चाहिए। पर जरूरी यह भी है कि वर और कन्या एक–दूसरे के नजदीकी रिश्तेदार नहीं होने चाहिए।

– वर और कन्या दोनों मानसिक रूप से स्वस्थ होने चाहिए।

– वर की उम्र 21 वर्ष और कन्या की 18 वर्ष होनी चाहिए। इससे कम आयु के वर या वधू का विवाह करना कानूनी अपराध है, किन्तु, विवाह हो जाने पर ऐसा विवाह वैध माना जायेगा।

इस अधिनियम के अनुसार कुछ कारणों से विवाह रद्द किया जा सकता है–

– पति की नामर्दगी के कारण।

– शादी धोखे या दबाव से हुई हो।

नोट–विवाह अपराध को भी इस अधिनियम में शामिल किया गया।

– पति या पत्नी के जीवित रहते हुए दूसरी शादी करना कानूनी अपराध है। कानून कहता है कि पत्नी के जीते जी दूसरी शादी करना कानूनन अपराध है। पहली पत्नी चाहे तो पति के खिलाफ थाने में या मजिस्ट्रेट की कोर्ट में शिकायत दर्ज कर सकती है, ऐसे पति को सात साल तक की कैद की सजा हो सकती है।

– ऐसी दूसरी शादी कानून में वैध शादी नहीं मानी जाती।

– पत्नी की सहमति से भी की गई दूसरी शादी गैर कानूनी है।

– दूसरी पत्नी को वास्तव में पत्नी का कोई हक नहीं मिलेगा। उसे न तो खर्चा मांगने का कोई हक होगा, न ही पति की सम्पत्ति में कोई अधिकार मिलेगा। हां, अगर पहली पत्नी की मौजूदगी दूसरी से छिपाई गई हो, तो दूसरी पत्नी पति के खिलाफ धोखे का मुकदमा कर सकती है। वह पति से मुआवजा लेने के लिए भी मुकदमा कर सकती है।

– ऐसी दूसरी शादी से पैदा हुए बच्चे को पिता की सम्पत्ति में वह सभी हक मिलेंगे जो कि जायज औलाद को मिलते हैं।

इस अधिनियम में स्पष्ट किया गया कि बाल विवाह कानूनी अपराध है तथा इस कार्य में लिप्त लोगों के लिए सजा का प्रावधान भी है। इस अधिनियम के अनुसार :

– 21 साल से कम उम्र के लड़के और 18 साल से कम उम्र की लड़की का विवाह बाल विवाह कहलाता है। ऐसा करना कानूनन जुर्म है। 21 साल से कम उम्र का लड़का और 18 साल से कम उम्र की लड़की यदि अपनी इच्छा से शादी करते हैं, तो उन्हें 15 दिन की कैद, 100 रु. तक का जुर्माना या फिर कैद और जुर्माना दोनों हो सकते हैं।

– 18 साल से ऊपर का लेकिन 21 साल से कम उम्र का लड़का और 18 साल से कम उम्र की लड़की से शादी करता है तो, उसे 15 दिन की कैद या 100 रू. तक का जुर्माना या कैद और जुर्माना दोनों हो सकते हैं।

– 21 साल से अधिक उम्र का लड़का अगर 18 साल से कम उम्र की लड़की से शादी करता है तो उसे तीन

माह तक की कैद तथा जुर्माना भी हो सकता है।

– बाल विवाह करवाने वालों को–माता–पिता, रिश्तेदार, विवाह करवाने वाले पंडित, एवं विवाह में मुख्य भूमिका निभाने वाले अन्य लोग–भी तीन महीने तक की कैद और जुर्माना हो सकता है। हां, किसी महिला (माता, पालक इत्यादि) को इस जुर्म में कैद नहीं किया जा सकता, केवल जुर्माना भरना पड़ेगा।

– इस बिल में इस बात की भी व्यवस्था की गई कि बाल विवाह की शिकायत कैसे होगी?

1. जिस बालक या बालिका का बाल विवाह करवाया जा रहा हो, उसका कोई रिश्तेदार, दोस्त या जानकार बाल विवाह के सम्बंध में थाने जाकर पूरी जानकारी दे सकता है। इस पर पुलिस पूछताछ करके मजिस्ट्रेट के पास रिपोर्ट भेजेगी। मजिस्ट्रेट की कोर्ट में केस चलेगा और बाल विवाह साबित होने पर अपराधी व्यक्तियों को सजा दी जाएगी। बाल विवाह करने या करवाने वालों को तीन महीने तक की कैद तथा 1,000 रूपये (एक हजार रूपये) तक का जुर्माना या फिर कैद और जुर्माना दोनों हो सकते हैं।

2. समय रहते शिकायत स्वयं करने या रिश्तेदार, दोस्त आदि द्वारा मजिस्ट्रेट के पास दर्ज करने पर और आदेश मिलने पर पुलिस ऐसे विवाह को रोकने की कार्रवाई करेगी और दोषी को सजा या जुर्माना हेतु केस दर्ज किया जाएगा।

इस अधिनियम द्वारा संविधान महिलाओं को तलाक का अधिकार प्रदान करता है। जिसके अनुसार यदि कोई महिला अपने पति से शारीरिक, मानसिक अथवा सामाजिक तौर पर प्रताड़ित की जाती है तो वह अपने पति से विवाह–विच्छेद (तलाक) कर सकती है। जिन आधारों पर कोई महिला विवाह–विच्छेद के लिए अदालत जा सकती है वे निम्नलिखित हैं–

– व्यभिचार या दूसरे के साथ संभोग।

– पति बिना किसी वजह से पत्नी को छोड़कर चला जाता है तो स्त्री तलाक ले सकती है।

– पति ने पत्नी को दो साल या इससे अधिक समय के लिए छोड़ रखा हो।

– यदि पति पत्नी के साथ शारीरिक या मानसिक दुर्व्यवहार या अत्याचार करे तो वह तलाक ले सकती है।

इस अधिनियम में स्त्रियों को अधिकार दिए गए हैं कि अगर उसका पति असाध्य पागल हो तो वह पुनर्विवाह कर सकती है। इसके अलावा अगर उसका पति सात साल से लापता हो और उसका कुछ पता न लग पा रहा हो तो भी वह अपना पुनर्विवाह कर सकती है।

अधिनियम में खर्चे–पानी (भरण–पोषण) की व्यवस्था इस प्रकार की गई है –

– तलाक देने वाली अदालत आदेश जारी करेगी कि पति पत्नी को खर्चे आदि की रकम देगा।

– पत्नी को खर्च इस आधार पर दिया जाएगा कि महिला अपनी आवश्यकताएं स्वयं पूरी करने में असमर्थ हो, पुरूष की आमदनी या जायदाद कितनी है, महिला की आवश्यकताएं क्या हैं आदि। यह सब देखने के बाद ही अदालत खर्चा तय करती है।

– यह खर्चा तब तक दिया जाता है, जब तक खर्चा पाने वाला जिंदा रहता है। अथवा जब तक वह दुबारा विवाह न कर ले।

भारतीय दंड प्रक्रिया (जाब्ता फौजदारी) संहिता–इस संहिता की धारा 125 में भरण–पोषण (खर्चा–पानी) देने के बाबत प्रावधान है।

– यह मुस्लिम महिला को छोड़कर शेष सभी सभी भारत में निवास करने वाली महिलाओं को प्राप्त हो सकेगा।

– मुस्लिम महिला को तलाक के बाद ईद्दत की अवधि तक यह अधिकार होगा।

– यह पत्नी, बच्चों के अलावा बूढ़े माँ–बाप को भी प्राप्त हो सकता है, जो अपनी संतान (लड़का–लड़की) में से किसी से भी चाहे वह शादी–शुदा हो, यह प्राप्त कर सकते हैं।

दूसरा हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम–1956 और महिला

देश की आजादी से पहले सम्पत्ति को लेकर मिलने वाले अधिकारों के सम्बंध में महिलाओं की स्थिति सुखद नहीं थी। कानून होते हुए भी उन्हें उनका यह अधिकार नहीं मिलता था।

महिलाओं की इस स्थिति में सुधार लाने के लिए अनेक संगठनों, समितियों एवं विभिन्न वर्गो ने सरकार को कई पत्र लिखे, प्रस्ताव भेजे और मांग की कि उन्हें बेहतर स्थिति में लाने के लिए ठोस कानून बनाया जाए। सरकार ने इस दिशा में पहल करते हुए बी.एन.राऊ सीमित बनाई और फिर उसकी सिफारिशों के आधार पर भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 बनाया, जिसके तहत महिलाओं को व्यापक अधिकार मिल सकें।

इस अधिनियम के बाद में कई संशोधन भी हुए, जिनके सम्बंध में यहां विवरण देना तर्क संगत नहीं होगा। अतएव इस संदर्भ में हम इस पुस्तक के आगामी अध्यायों में पढ़ेंगे।

फिलहाल आइए, इस अधिनियम के विभिन्न पहलुओं को देखते हैं।

– इस अधिनियम के अनुसार अगर किसी पुरूष की मृत्यु हो जाती है और उसने कोई वसीयत नहीं की है, तो उसकी सम्पत्ति का बंटवारा उसकी माता, पुत्र–पुत्रियों और पत्नी के बीच होगा।

– उस संपत्ति का एक भाग माता को, एक विधवा पत्नी को, एक–एक बेटों को तथा एक–एक हिस्सा पुत्रियों को मिलेगा। यदि उसके बाद माता की मृत्यु हो जाती है तो उसका हिस्सा उसके पोते–पोतियों को यानी पुरूष के पुत्र–पुत्रियों में बराबर–बराबर भागों में बंट जाएगा। उसमें विधवा पत्नी को हिस्सा नहीं मिलेगा।

– अब इसके बाद जब विधवा पत्नी की मौत हो जाती है तो उसका हिस्सा भी उसके बेटे–बेटियों में बराबर बंटेगा। लेकिन यदि विधवा पत्नी की मौत हो जाती है और माता जीवित है तो पत्नी का हिस्से में से उसे कुछ नहीं मिलेगा।

आइए इस अधिनियम के इन पहलुओं को एक उदाहरण के माध्यम से समझते हैं।

मान लीजिए, एक व्यक्ति सुधीर कुमार (काल्पनिक नाम) अपनी सम्पत्ति की वसीयत किए बिना ही परलोक सिधार जाते हैं। उनकी माता सावित्री जिंदा है और विधवा पत्नी रीटा के अलावा दो बेटे रिंकू और टिंकू और दो बेटियां किन्नी और मिन्नी हैं तो सुधीर कुमार की सम्पत्ति के छह हिस्से होंगे और इन सभी को एक–एक हिस्सा मिलेगा।

अब अगर सावित्री की मौत हो जाए तो उसकी सम्पत्ति के चार हिस्से होंगे जो रिंकू, टिंकू, किन्नी और मिन्नी को एक–एक मिलेंगे।

रीटा को कुछ नहीं मिलेगा। इसी प्रकार अगर रीटा की मौत हो जाए तो भी चार हिस्से होंगे और चारों बच्चों को एक–एक हिस्सा मिलेगा। सावित्री देवी को कुछ नहीं मिलेगा।

– इस अधिनियम के अनुसार अगर मृतक की एक से अधिक पत्नियाँ हैं पत्नी को मिलने वाले एक भाग का पत्नियों में बराबर का बंटवारा हो जाएगा। अर्थात रीटा के अलावा अगर सुधीर कुमार की दो और पत्नियां हैं तो रीटा का हिस्सा तीन भागों में बंट जाएगा। यानी सारी पत्नियों को मिलाकर सम्पत्ति का एक हिस्सा ही मिलेगा, जो बराबर बांटा जाएगा।

पहले किसको और बाद में किसे

इस अधिनियम में यह व्यवस्था भी की गई है कि मृतक अगर बिना वसीयत किए परलोक सिधार जाता है तो सम्पत्ति पहले किसे मिलेगी और बाद में किसको।

भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम 1956 की धारा 10 में सम्पत्ति प्राप्त करने वालों को दो भागों में बांटा गया है। पहले भाग में उन लोगों को लिया गया है, जो जिंदा है तथा दूसरे भाग में उन लोगों को लिया गया है, जो जिंदा नहीं है और उनकी सम्पत्ति उनके वारिसों में बंटनी है। आइए, इसे क्रमवार समझें।

– सुधीर कुमार की सम्पत्ति का बंटवारा तो आप समझ ही चुके हैं। अब सवाल यह उठता है कि अगर रिंकू, टिंकू या किन्नी, मिन्नी में से किसी की मौत हो जाए या बंटवारे से पहले ही किसी की मौत हो चुकी हो, तो उसकी सम्पत्ति किसे मिलेगी? इसका जवाब यह है कि इनके वारिसों को मिलेगी। रिंकू और टिंकू की स्थिति भी सुधीर कुमार जैसी होगी और सम्पत्ति का बंटवारा भी ठीक उसी प्रकार होगा, जैसे सुधीर कुमार का हुआ था यानी इनकी पत्नियों को एक हिस्सा, माता को एक हिस्सा तथा बेटे और बेटियों को एक–एक हिस्सा। लेकिन किन्नी और मिन्नी की मौत के बाद उनका हिस्सा बराबर उनके जिंदा बेटे और बेटियों में बांटा जाएगा।

अपनी सम्पत्ति की खुद मालकिन

इस अधिनियम की धारा 14 के अनुसार महिला के कब्जे में जो भी सम्पत्तियां हैं, उनकी वे पूरी तरह से मालकिन मानी जाएंगी। पहले उनका सीमित स्वामित्व होता था। इस धारा की उपधारा दो यह कहती है कि महिलाओं को उन सम्पत्तियों का मालिकाना अधिकार नहीं मिलेगा, जिन पर उनका पहले से कोई अधिकार नहीं था।

इसी धारा के अनुसार जो अन्य पहलू हैं, आइए उनके सम्बंध में भी जान लेते हैं।

– हिंदू महिला के कब्जे में मौजूद किसी भी सम्पत्ति–चाहे वह इस अधिनियम के लागू होने से पहले हासिल की गई है या बाद में–का उसे पूरी तरह से मालकिन माना जाएगा न कि सीमित मालकिन।

मैं यहां स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि इस अधिनियम के अनुसार सम्पत्ति से मतलब उस चल और अचल सम्पत्ति से है, जो हिंदू महिला ने विरासत से, वसीयत द्वारा, विभाजन में, गुजारे या गुजारे की बकाया रकम के बदले, विवाह से पहले, विवाह के समय या विवाह के बाद दान द्वारा किसी व्यक्ति से, सम्बंधी से या अपने परिश्रम से, अपने कब्जे से या फिर स्त्रीधन के रूप में प्राप्त की हो। लेकिन यह ऐसी सम्पत्ति पर लागू नहीं होती, जो किसी लिखत के तहत या फिर सिविल न्यायालय की डिक्री या आदेश के तहत या फिर मध्यस्थ के फैसले के तहत ऐसी शर्तों से प्राप्त हो, जिसमें सीमित सम्पदा देने की बात तय की गई हो।

यह जान लीजिए कि ऐसी सम्पत्तियां, जिनमें चल और अचल दोनों ही शामिल हैं, जैसे ससुराल या मायके से हिस्सेदारी में मिली सम्पत्तियां, विवाह के समय मिली हुई सम्पत्ति या ऐसी सम्पत्ति, जो उनकी कमाई की है, पर उनका अधिकार है। पहले यह अधिकार महिलाओं को वास्तव में नहीं मिलता था।

कब्जे का मतलब भी समझ लें

सुप्रीम कोर्ट ने हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 14 में 'कब्जा' शब्द की भी पूरी व्याख्या की है।

यह व्याख्या एक मामले की सुनवाई के दौरान की गई थी। यह केस था गुम्मल पुरा टग्गिना मतादाकोट्टुरूस्वामी बनाम सेटरा वीरव्वा का। यह मुकदमा वर्ष 1959 में कोर्ट के पास पहुंचा था तथा नंबर था 577। इस मुकदमे के अनुसार कारी वीरप्पा नामक एक व्यक्ति की बिना वसीयत किए ही मौत हो चुकी थी। उसकी कुछ सम्पत्ति पर उसके बेटे ने कब्जा कर लिया था। वकील का तर्क था कि पूरी सम्पत्ति महिला को दिलवाई जाए। कोर्ट ने कहा कि पुत्र ने जब सम्पत्ति पर कब्जा किया था, तब यह अधिनियम नहीं बना था। अधिनियम बनने के बाद वीरप्पा की विधवा के कब्जे में जो सम्पत्ति थी, वह उसी की मालकिन हो सकती है। कोर्ट के इस निर्णय से 'कब्जा' शब्द की व्याख्या हो गई।

सम्पत्ति का मर्जी से समझौता

यह अधिनियम बताता है कि कोई भी महिला अपनी सम्पत्ति को समझौते के तहत किसी को भी दे सकती है। एआईआर 1996 एससी 869 मामले के तहत रामनाथ दीवान ने अपनी आंशिक सम्पत्ति की सत्यवती के नाम पर एक वसीयत की, जिसमें उसने डॉक्टर्स लेन की एक सम्पत्ति सत्यवती को दे दी। बाद में उसके बेटे ने इस पर विवाद खड़ा कर दिया कि यह सम्पत्ति पूरी तरह सत्यवती के अधिकार में नहीं है। फिर मां–बेटा में यह समझौता

हुआ कि सत्यवती मकान की पहली मंजिल पर रह सकती है और पुत्र ऊपर की मंजिल पर रहेगा। बदले में पुत्र मां को प्रतिमाह 150 रूपए गुजारे के लिए देगा। इस प्रकार कहा जा सकता है कि महिला अपनी सम्पत्ति पर किसी भी तरह का समझौता भी कर सकती है।

महिला की मौत होने पर

इस अधिनियम के तहत अगर किसी हिंदू महिला की बिना वसीयत किए ही मौत हो जाए तो संपत्ति पर हक उसके पुत्र व पुत्रियों का होगा। इसमें मृत बच्चों को भी शामिल किया जाएगा और उनका हक उनके उत्तराधिकारियों को दिया जाएगा। इसके अलावा इसमें महिला के पति का भी हिस्सा होगा। लेकिन अगर पति की पहले ही मौत हो चुकी है तो यह हिस्सा पति के उत्तराधिकारियों में बांट दिया जाएगा। अगर पति का कोई उत्तराधिकारी नहीं है, तो जिस महिला की सम्पत्ति है, उसके माता–पिता को मिल जाएगी। अगर माता–पिता नहीं है तो पिता के उत्तराधिकारियों को मिलेगी। अगर पिता का कोई उत्तराधिकारी नहीं है तो माता के उत्तराधिकारियों को यह सम्पत्ति मिलेगी। लेकिन यह तरीका तभी अपनाया जाएगा, जब महिला की खुद की कमाई हुई सम्पत्ति का बंटवारा किया जाएगा। अगर महिला को कोई सम्पत्ति उत्तराधिकार में मिली है तो उसके हकदार केवल उसके बच्चे होंगे। इन बच्चों में मृत बच्चों को भी शामिल किया जाएगा तथा उनके उत्तराधिकारियों की सम्पत्ति का भाग दे दिया जाएगा।

आइए इसे फिर से स्पष्ट रूप से समझ लेते हैं।

भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की संपत्ति धारा 16 में बिना वसीयत किए मर जाने वाली हिंदू महिला की संपत्ति का बंटवारा इस प्रकार होगा –

– प्रथम, पुत्रों व पुत्रियों को, जिनमें पहले से मृत पुत्र व पुत्रियां भी शामिल हैं तथा मृतका के पति को।
– द्वितीय, उपरोक्त न होने पर पति के वारिसों को।
– तृतीय, यह भी न होने पर मृतका के वारिसों को।
– चतुर्थ, यह भी न होने पर पिता के वारिसों को।
– अंत में, यह भी न होने पर माता के वारिसों को।

गर्भ की संतान भी उत्तराधिकारी

एक बार ऐसा हुआ कि मेरी एक रिश्तेदार की सड़क दुर्घटना में मौत हो गई। उस समय वह पूरे महीनों से गर्भवती थी। संयोग ऐसा हुआ कि मृत महिला के गर्भ से जीवित बच्चे का जन्म हो गया। जब सम्पत्ति में बंटवारे का समय आया तो महिला की मौत के बाद पैदा हुए बच्चे को उसके हक से वंचित किया जाने लगा। उस समय मौके पर कुछ वकील भी मौजूद थे, जिन्हें कानून का पूरा पता नहीं था। मैंने ऐन मौके पर पहुंचकर उन लोगों को बताया कि मौत के बाद पैदा हुए बच्चे का भी मां की सम्पत्ति पर उतना ही हक बनता है, जितना कि पहले पैदा हुए बच्चों का। किसी ने मेरी बात का यकीन नहीं किया। शहर के सीनियर वकीलों के सम्पर्क किया गया और मेरी बात सच निकली। यानी मौत के वक्त गर्भ में होने तथा बाद में जिंदा पैदा हो जाने वाले बच्चे का भी मां की सम्पत्ति पर अपने भाई–बहनों की तरह बराबर का अधिकार है।

ऐसा भी कर सकती है महिला

शायद आप इसे पढ़कर चौंक पड़े, लेकिन कानूनन यह सही है। गौड़ा बनाम नागेगौड़ा केस एआईआर 2004 एससी 3974 मामले में एक महिला अपने पति की मौत के बाद उसकी सम्पत्ति की पूरी उत्तराधिकारिणी हो गई। पूरी सम्पत्ति पर उसका कब्जा हो गया। इस महिला का कोई बच्चा नहीं था और इसने एक बच्चा गोद ले लिया। बाद में यूं हुआ कि उसने अपनी संपत्ति उस गोद लिए बच्चे को न देकर किसी और को दे दी। बच्चे की ओर से सुप्रीम कोर्ट तक मामला पहुंच गया। इस पर सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि केवल गोद लेने मात्र से गोद लेने वाली माता का अपनी सम्पत्ति को स्थानांतरित करने का अधिकार समाप्त नहीं हो जाता। वह अपनी सम्पत्ति की मनचाही वसीयत कर सकती और उसे किसी और के नाम स्थानांतरित कर सकती है।

यह उन गोद लिए जाने वाले बच्चों के लिए याद रखने वाली बात है कि वे गोद जाने के बाद अपनी मां की सम्पत्ति के तब तक मालिक नहीं बन सकते, जब तक कि गोद लेने वाली मां की इच्छा न हो, या फिर वह बिना कोई वसीयत किए ही चल न बसे।

मुझे पूरी आशा है कि आप इस अधिनियम के बारे में अधिकांश बातें जान चुके होंगे। अब आजादी के बाद पारित हुआ तीसरा अधिनियम, जिसने हिंदू महिलाओं को संशक्त करने की दिशा में काम किया।

तीसरा अधिनियम : हिंदू नाबालिग एवं संरक्षता अधिनियम 1956

इस अधिनियम के अनुसार जिस बच्चे की उम्र 18 वर्ष नहीं हुई, वह नाबालिग है तथा वह अपने अभिभावक के संरक्षण में रहेगा।

इस अधिनियम में अभिभावक की परिभाषा भी स्पष्ट की गई है। अभिभावकों के जो प्रकार बताए गए हैं, वे इस प्रकार हैं।

– पहला स्वाभाविक अभिभावक यानी माता–पिता।
– दूसरे जिसे माता–पिता किसी व्यक्ति के संरक्षण में भेज दें।
– तीसरा, जिसके संरक्षण में न्यायालय बच्चे को भेज दे।
– चौथा, वह जो अपनी विशेषताओं से कोर्ट में साबित कर दे कि वह ही बच्चे का अभिभावक बनने लायक है। उसी के अभिभावक बनने में ही बच्चे का कल्याण है।

अधिनियम के अनुसार पिता को नाबालिग बच्चे का पहला स्वाभाविक अभिभावक माना गया है तथा माता को दूसरा। लेकिन साथ ही यह भी माना गया है कि अगर बच्चा पांच वर्ष से छोटा है तो पहला स्वाभाविक अभिभावक उसकी मां है तथा पिता दूसरा। बालिग हो जाने पर व बेटी की शादी हो जाने पर उसका पति उसका अभिभावक बन जाएगा।

इस अधिनियम का स्त्रियों को यह लाभ मिला कि बच्चों के मामले में उनकी उपयोगिता और महत्त्व बढ़ गया। पहले जहां स्त्रियों को मनमाने तरीके से उनके बच्चों को दूर कर दिया जाता था या अलग कर दिया जाता था, वह कुप्रथा बंद कर दी गई। इसके अलावा पहले मां की सहमति के बिना बच्चे को परिवार के लोग कहीं गोद दे दिया करते थे, वह प्रथा बंद हो गई तथा इस मामले में स्त्री की सीधी मर्जी चलने लगी।

चौथा अधिनियम
हिंदू दत्तक ग्रहण एवं भरण पोषण अधिनियम 1956

संतानहीन स्त्री के प्रति समाज की मानसिकता अभी भी बदली नहीं है उन्हें दुर्भाग्यशाली या बांझ जैसी उपमाओं से बेझिझक पुकारा जाता है। जबकि इसका कारण पुरूष भी हो सकता है, किंतु पुरूष को प्रायः धिक्कारा नहीं जाता बल्कि उसे विवाह विच्छेद तथा दूसरी शादी के लिए उकसाया जाता है। चाहे दूसरी पत्नी का हाल भी पहले वाली की तरह क्यों न हो। इस अधिनियम में स्त्री को गोद लेने का अधिकार दिया गया है। देखा जाए तो दत्तक संतान ग्रहण करना हमारे देश में वैदिककाल से प्रचलित है। हिन्दू धर्मशास्त्र के अनुसार मनुष्य तीन ऋण लेकर पैदा होता है – ऋषिऋण, देवऋण और पितृऋण। माना जाता है कि वेदों के अध्ययन से ऋषिऋण चुकता हो जाता है, धार्मिक यज्ञों से देवऋण पूरा होता है और पितृऋण तब चुकता होता है जब वह अपने पुत्र का मुंह देखता है। प्रचलित मान्यताओं के अनुसार बिना संतान के मोक्ष प्राप्ति असम्भव मानी गई है। इसीलिए मनुस्मृति में भी सगी संतान के अभाव में दत्तक संतान का उल्लेख मिलता है। वैदिक काल में कन्याएं भी गोद ली जाती थीं। कुंती को महाराज भोज ने गोद ही लिया था। और अम्बा–अम्बालिका ने विधवा होने के बाद ही पांडु और धृतराष्ट्र को नियोग द्वारा जन्म दिया था। परंतु बाद में जब पुरूष प्रधान समाज की जटिलता बढ़ी तब ऐसा होना बंद हो गया।

हिन्दू दत्तक ग्रहण एवं भरण–पोषण अधिनियम 1956 में इन खामियों को दूर किया गया। इस अधिनियम में स्पष्ट किया गया कि एक विधवा को भी बच्चा गोद लेने का उतना ही अधिकार है, जितना कि एक सधवा को। साथ ही यह भी प्रावधान किया गया कि बिना पत्नी की सहमति के पति तथा बिना पति की सहमति के पत्नी बच्चा गोद नहीं ले सकती। इसके अलावा इस अधिनियम में यह भी बताया गया कि गोद लेने वाले माता–पिता अपनी मर्जी के मुताबिक सम्पत्ति की वसीयत करने का अधिकार रखते हैं यानी वे चाहें तो उस बच्चे को अपनी सम्पत्ति नहीं भी दे सकते, जिन्हें उन्होंने गोद लिया है। लेकिन अगर वे बिना वसीयत किए ही परलोक सिधार जाते हैं तो गोद लिए हुए बच्चे को उनकी सम्पत्ति मिल जाएगी।

दोनों ले सकते हैं बच्चा गोद

हिन्दू दत्तक ग्रहण एवं भरण–पोषण अधिनियम 1956 के अनुसार बच्चा कानूनन कैसे गोद लिया जा सकता है, इस सम्बंध में आइए, विस्तार से सब जानते हैं। पहले इस अधिनियम की धारा 6 के बारे में जान लेते हैं। इस अधिनियम में स्पष्ट किया गया है कि जब इसके जरूरी अधिनियमों को मान लिया जाएगा, तभी किसी बच्चे को गोद लिया जा सकता है।

– धारा 6 के अनुसार : बच्चा गोद तभी लिया जा सकता है, जब गोद लेने वाला व्यक्ति बच्चे के भरण–पोषण की हैसियत रखता हो और इसके योग्य हो।
– धारा 7 के अनुसार कोई भी हिंदू पुरूष जो मानसिक रूप से स्वस्थ हो और बालिग हो, पुत्र या पुत्री गोद लेने की हैसियत रखता है, लेकिन तब, जब उसकी पत्नी जीवित हो, पत्नी ने पूर्ण और अंतिम तौर पर वैराग्य न ले लिया हो या उसने धर्म परिवर्तन न कर लिया हो या फिर वह मानसिक तौर पर विक्षिप्त न हो। अगर ऐसा नहीं है तो पति अपनी पत्नी की सहमति के बच्चा गोद नहीं ले सकता।

यहां मैं यह भी स्पष्ट करना चाहूंगा कि अगर एक व्यक्ति की एक से अधिक पत्नियां हैं, तो उसे सभी पत्नियों की सहमति लेनी जरूरी है, बशर्ते कि किसी पत्नी ने जैसा कि ऊपर दिया गया है, वैराग्य न लिया हो, धर्म परिवर्तन न किया हो या वह मानसिक रूप से विक्षिप्त न हो।

– धारा 8 के तहत कोई भी हिंदू महिला जब मानसिक रूप से स्वस्थ है, बालिग है, अंतिम रूप से संसार से वैराग्य नहीं लिया या धर्म परिवर्तन करने के बाद हिंदू नहीं रह गई तो वह अपने पति की सहमति से बच्चा गोद ले सकती हैं।

अपनी संतान को गोद लेना

– धारा 9 बताती है कि संतान के माता या पिता या अभिभावक को छोड़कर किसी भी व्यक्ति के पास संतान गोद देने लेने की हैसियत नहीं होगी। बच्चे के पिता या माता, यदि जीवित हों तो उन्हें अपने पुत्र या पुत्री को गोद देने का बराबर का अधिकार होगा। लेकिन जब तक इन दोनों में से कोई मानसिक रूप से अस्वस्थ न हो, वैराग्य न ले लिया हो या धर्म परिवर्तन करके हिंदुत्व न छोड़ दिया हो, तब तक बच्चे को गोद देने के लिए दोनों की सहमति जरूरी है।

मैं समझता हूं कि इस प्रकार संतान के मामले में स्त्री को पुरूष के बराबर अधिकार दिया गया है। अगर वह हर तरह से ठीक–ठाक है तो उसकी अनुमति के बिना न तो किसी बच्चे को गोद लिया जा सकता है और न ही गोद दिया जा सकता है।

एक खास बात जो मैंने इस अधिनियम में पढ़ी है, वह यह है कि अगर कोई उपरोक्त कारणों से अगर पत्नी अयोग्य है तो पति बेटा तो गोद ले सकता है, लेकिन बेटी गोद लेने के लिए उसकी तथा बच्ची की आयु में कम से कम 21 वर्ष का अंतर जरूरी है। ठीक यही शर्त महिला पर भी है। अगर उसे पति के अयोग्य होने पर कोई बच्चा गोद लेना है तो उसके और बच्चे की आयु में भी इतना ही, यानी 21 वर्ष का अंतर होना चाहिए।

बड़ा सवाल : अनेक पत्नियां होने पर माता कौन?

पुस्तक पढ़ते समय आपके दिमाग में भी यह सवाल आ सकता है कि अगर एक व्यक्ति की अनेक पत्नियां हों और वह उन सभी की सहमति से बच्चा गोद लेता है तो उसकी माता किसे कहा जाएगा। यह महत्वपूर्ण सवाल है

और इसका उत्तर भी इसी अधिनियम में दिया गया है। आइए, इसे भी जान लेते हैं।

– जहाँ कोई हिंदू, जिसकी एक ही पत्नी है, वही गोद लिए जाने वाले बच्चे की माता मानी जाएगी।

– जहां एक से अधिक पत्नियां है और सभी पत्नियों की सहमति से बच्चा गोद लिया गया है, तो जिस पत्नी के साथ उसका सबसे पहले विवाह हुआ है, कानूनी रूप से वही बच्चे की माता समझी जाएगी। अन्य माताएं सौतेली माताओं की श्रेणी में आएंगी।

– अगर कोई विधुर, तलाकशुदा या अविवाहित पुरूष संतान को गोद लेता है और बाद में विवाह करता है तो विवाहित पत्नी बच्चे की सौतेली माता मानी जाएगी।

– इसी तरह अगर कोई विधवा, तलाकशुदा या अविवाहित महिला संतान गोद लेती है और बाद में शादी करती है तो वह गोद ली हुई संतान का सौतेला पिता माना जाएगा।

कुछ अन्य बातें

– कोई भी अकेली महिला तभी किसी बच्चे को गोद ले सकती है, जब वह स्वस्थ दिमाग की हो, नाबालिग न हो, शादीशुदा न हो या फिर जिसका तलाक हो चुका हो या फिर उसका पति पूरी तरह से सन्यास ले चुका हो या वह हिंदू न रह गया हो या फिर न्यायालय द्वारा मानसिक रूप से अस्वस्थ घोषित किया जा चुका हो।

– धारा 11 में यह शर्त है कि स्त्री तभी बच्चा गोद ले सकती है, जब उसका कोई हिंदू पुत्र न हो या फिर पुत्र का पुत्र न हो।

हिंदू दत्तक एवं भरण–पोषण अधिनियम कहता है कि यदि कोई पति–पत्नी बच्चा गोद लेना चाहते हैं तो उस बच्चे को गोद देने वाले माता–पिता के साथ सहमति जरूर होनी चाहिए। यह सहमति किसी भी दबाव में नहीं होनी चाहिए। खास बात यह भी है कि यह सहमति जुबानी नहीं, बल्कि लिखित रूप में होनी जरूरी है। इससे भी खास बात यह है कि उस लिखित सहमति को पंजीकृत करवाया जाना भी जरूरी है ताकि दोनों पक्षों में से कोई भी बाद में न मुकर सके। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि बच्चे को गोद देना या लेना तभी वैध माना जाएगा, जब इसका कानूनी तोर पर पक्का रिकार्ड होगा।

नीलम की कहानी

एक दिन मेरी पत्नी की सहेली नीलम मुझसे मिलने के लिए आई। उसने बताया कि उसकी एक रिश्तेदार की कोई संतान नहीं है तथा वह उसकी बेटी को गोद लेना चाहती है। वह भी उसे बच्चा गोद देना चाहती है। मैंने पूछा 'इसमें आखिर परेशानी क्या है? इकरारनामा तैयार करवा लो। दोनों पक्षों के हस्ताक्षर करके उसे पंजीकृत करवा लो। तुम्हारी बच्ची उनके गोद चली जाएगी। लेकिन उसने धीरे–धीरे इंकार में गर्दन हिलाते हुए कहा–'बात यह नहीं है। मैं कोई और बात करने आई हूं। मैं दरअसल यह चाहती हूं कि अगर वे मेरी बच्ची को गोद लेते है तो वही उसकी संपत्ति की अधिकारी भी बननी चाहिए। कहीं ऐसा न हो कि वे बच्ची को गोद ले लें और अपनी संपत्ति का उत्तराधिकारी किसी और को बना दें।'

मैं नीलम की मंशा समझ गया। मैंने उसे कानूनी पहलू बताते हुए कहा : 'यह कोई मुश्किल बात नहीं है। जो इकरारनामा तैयार किया जाएगा, उसमें यह शर्त भी जुड़वा दो कि बच्ची को इस शर्त पर गोद दिया जाता है कि वही गोद लेने वाले माता–पिता की संपत्ति की उत्तराधिकारिणी होगी। बच्ची को इसी शर्त पर गोद दिया जाता है।

जब इकरारनामे में यह दर्ज हो जाएगा तो गोद लेने वाले माता–पिता इंकार नहीं कर सकते। केवल गोद ली हुई बच्ची ही उनकी संपत्ति की वारिस होगी। लेकिन अगर इकरारनामे में यह बात दर्ज नहीं की गई तो उनकी मर्जी होगी कि वह अपनी वसीयत जिसके नाम चाहें, कर दें।

मैंने नीलम को एक केस का हवाला देते हुए बताया कि– 'एआईआर 1991 एससी 1969 मामला बीटीगोबिंदप्पा बनाम बी. नरसिम्हैया का था। इस मामले में सुप्रीम कोर्ट ने हाईकोर्ट के उस फैसले पर मुहर लगाई, जिसमें कहा गया था कि नरसिम्हैया नाम के बच्चे को गोद लेते समय गोद लेने वाले माता–पिता ने मंजूर किया था कि उनकी तमाम चल और अचल सम्पत्ति का वारिस गोद लेने वाला बच्चा होगा। इसलिए माता–पिता इस बात से नहीं मुकर सकते। इस पर विपक्ष के वकील ने कहा कि कुछ सम्पत्ति बच्चे की माता के स्त्रीधन के रूप में है। कानूनन वह उसकी वसीयत किसी के भी नाम करवा सकती है। लेकिन हाईकोर्ट ने यह दलील नहीं मानी तथा गोद लेते समय जो इकरारनामा हुआ था, उसी की शर्त को माना।

नीलम मेरे इस उत्तर से संतुष्ट हुई तथा मेरा धन्यवाद करके वहां से चली गई। कुछ दिन बाद जब उसने अपनी बच्ची को गोद देने का इकरारनामा तैयार करवाया तो उसमें स्पष्ट लिखवा दिया कि गोद लेने वाले माता–पिता की तमाम चल और अचल संपत्ति की वारिस गोद ली हुई बच्ची होगी। इस प्रकार बच्ची का भविष्य सुरक्षित हो गया।

भरण–पोषण के बारे में जानें

अब आइए इस अधिनियम के दूसरे पार्ट का अध्ययन करते हैं, जिसमें भरण–पोषण के संबंध में विस्तार से बताया गया है। इस पार्ट में महिलाओं को भरण–पोषण मिलने की बात है। इस अध्याय की मूल बात यह है कि अगर कोई पत्नी पति से अलग रहना चाहे, तो उसे भी अपने पति से भरण–पोषण का खर्च पाने का अधिकार है। लेकिन इसके लिए कुछ शर्तें भी हैं, जिनका अध्ययन करना जरूरी है। साथ ही मैं यह भी बताना चाहूंगा कि पुत्रवधू के भी भरण–पोषण के अधिकार हैं।

सबसे पहले तो यह बताना चाहूंगा कि इस अधिनियम के अनुसार हर वह हिंदू पत्नी अपने भरण पोषण का अधिकार रखती है, जिसकी शादी इस अधिनियम के लागू होने के बाद या पहले हुई है। यानी यह बात कोई मायने नहीं रखती कि उसकी शादी अधिनियम के बनने के बाद हुई है या पहले। अगर वह पति से अलग रहना चाहती है तो उसे पति से भरण–पोषण पाने का अधिकार है। इतना ही नहीं, अगर उसके पति की मौत हो जाती है तो वह अपने ससुर से भी भरण–पोषण पाने का अधिकार रखती है। इस अधिनियम की धारा 18 में जहां पत्नी के भरण–पोषण की बात स्पष्ट है, वहीं धारा 19 में पुत्रवधू के अधिकारों की बात कहीं गई है। लेकिन पत्नी या पुत्रवधू किन शर्तों पर यह अधिकार पा सकती हैं, यह जानना जरूरी है।

– वह तभी यह अधिकार प्राप्त कर सकती है, जब उसका पति बिना किसी उचित कारण और बिना उसकी सहमति के या उसकी इच्छा के खिलाफ उसे छोड़ने का या जान–बूझकर उसकी अपेक्षा करने का दोषी है।

– यदि उसका पति उसके साथ ऐसी क्रूरता का व्यवहार करता है, जिससे उसके अपने मन में इस बात की उचित आशंका पैदा हो जाती है कि उसका अपने पति के साथ रहना नुकसानदेह होगा या उसे चोट पहुंचेगी।

– यदि उसका पति गंभीर कुष्ठ रोग से पीड़ित हैं।

– यदि पति की कोई और पत्नी जीवित है और उसने यह बात शादी के वक्त छिपा ली।

– यदि उसका पति उसी घर में जिसमें उसकी पत्नी निवास करती है, कोई रखैल रखता है या किसी रखैल के साथ किसी अन्य स्थान में नियमित रूप से रहता है।

– यदि उसका पति कोई और धर्म अपना लेने के कारण हिंदू नहीं रह गया।

– यदि उसके अलग रहने का कोई अन्य न्यायोचित कारण है।

इन स्थितियों में नहीं मिलेगा अधिकार

– यदि कोई हिंदू पत्नी बदचलन है या कोई और धर्म अपना लेने के कारण हिंदू नहीं रह गई, तो वह भरण–पोषण का अधिकार लेने का हकदार नहीं होगी।

पुत्रवधू के मामले में

– कोई भी हिंदू पत्नी, चाहे उसका विवाह यह अधिनियम बनने के बाद हुआ हो या पहले, पति की मौत के बाद अपने ससुर से भरण–पोषण पाने की अधिकारी होगी। लेकिन तब तक, जब तक कि वह खुद अपनी कमाई से या अन्य सम्पत्ति से अपना भरण–पोषण करने के लायक नहीं हो जाती। अगर वह पहले से इस लायक है तो उसे ससुर से यह अधिकार नहीं मिल सकता।

– अगर उसके पास पति, माता–पिता या पुत्र–पुत्री की कोई सम्पत्ति है और वह भरण–पोषण के लायक है तो उसे ससुर से यह सहायता नहीं मिल सकती।

– अगर ससुर के कब्जे वाली पुश्तैनी सम्पत्ति से, जिसमें से पुत्रवधू को कोई हिस्सा नहीं मिलता है और ससुर के लिए ऐसा करना सम्भव नहीं है, तो इस अधिनियम की धारा एक के अनुसार ऐसी किसी भी बाध्यता को लागू नहीं करवाया जा सकता।

– अगर पुत्रवधू पति की मौत के बाद विवाह कर लेती है तो ससुर की भरण–पोषण देने की बाध्यता समाप्त हो जाएगी।

इस अधिनियम का खास पहलू

इस अधिनियम को पढ़ने के बाद मुझे इसका एक खास पहलू मिला, जो जान लेना बेहद जरूरी लगता है। एक बार ऐसा हुआ कि मेरी जान–पहचान में एक व्यक्ति सुधाकर की मौत हो गई। पता चला कि उसके नाम कोई पैत्रिक सम्पत्ति नहीं थी। उसने अपनी मेहनत से कुछ सम्पत्ति अर्जित की थी, लेकिन मौत से पहले अपनी वसीयत अपने बेटे के नाम कर गया।

कानूनन वह ऐसा कर सकता था। लेकिन जब उसकी मौत हुई, तब उसकी पत्नी, एक अविवाहित बेटी और उसके माता–पिता भी उसी पर आश्रित थे। अब बेटा कहने लगा कि पिता ने सारी सम्पत्ति उसके नाम की है, इसलिए वह उसी की है। उसके दादा–दादी, माँ और बहन ने कहा कि बेशक वह उसकी है, लेकिन उनका गुजारा कैसे होगा? उनका जीवन कैसे गुजरेगा। उनमें से किसी एक पास भी भरण–पोषण का कोई साधन नहीं है।

उनके रिश्तेदार भी कोई समझौता नहीं करवा सके और बात मुझ तक पहुंच गई। मुझे हैरानी इस बात की हुई कि इस मामले में अभी तक किसी काबिल वकील की सलाह क्यों नहीं ली गई। मैं सुधाकर के घर पहुंचा और परिवार के सभी सदस्यों को बिठाकर कानून समझाया। मैंने उन्हें बताया कि अपनी कमाई हुई सम्पत्ति किसी के भी नाम की जा सकती है, लेकिन जिसे भी वह सम्पत्ति मिलती है, उसी पर मृतक के आश्रितों के भरण–पोषण करने की जिम्मेदारी होती है।

पुत्र इस पर बहस करने लगा। मैंने मौके पर एक योग्य वकील को बुलाया और उससे हिंदू दत्तक एवं भरण–पोषण अधिनियम के अनुसार स्थिति स्पष्ट करने को कहा। लेकिन वह वकील क्रिमिनल मामले देखता था तथा सिविल मामलों की उसे ज्यादा जानकारी नहीं थी। इस कारण दूसरा वकील बुलाना पड़ा जो सिविल मामलों का अच्छा जानकार हो। उस वकील ने मेरी बात की पुष्टि की। उसने बेटे को बताया कि मौत के बाद मृतक की संपत्ति जिसे मिलती है, उसे मृतक के आश्रितों के भरण–पोषण की जिम्मेवारी निभानी पड़ती है। ऐसा कानून है। उसने यह भी बताया कि आश्रित की परिभाषा क्या है। आश्रितों में मृतक के पिता, माता, विधवा जब तक कि दूसरा विवाह न कर ले, उसका बेटा, पहले से मर चुके बेटे के नाबालिग बच्चे, अविवाहित पुत्र या पुत्री, मरे हुए पुत्र की अविवाहित पुत्री या पुत्र की अविवाहित पुत्री आदि जो मृतक के भरण पोषण पाते थे, अब मृतक की सम्पत्ति पाने वाले से भरण पोषण का अधिकार रखते हैं। इसके अलावा अगर मृतक की कोई विधवा पुत्री जिसके भरण–पोषण का कोई इंतजाम नहीं है, उसे भी उसी सम्पत्ति से भरण–पोषण देना होगा।

अब एक और मामला

इसी तरह का एक और मामला मेरे सामने तब आया, जब मौन से पहले ही एक व्यक्ति ने अपनी सारी सम्पत्ति बेच दी। अब आश्रितों के सामने समस्या खड़ी हो गई कि भरण–पोषण का इंतजाम कहां से किया जाए। अब संपत्ति जिस व्यक्ति ने खरीदी थी, उसने साफ कह दिया कि मैं क्यों सहायता करूं। मैंने सम्पत्ति कोई मुफ्त में थोड़े ही ली है। कई वकीलों ने भी इस अधिनियम की पूरी जानकारी न होने पर कह दिया कि खरीदी हुई संपत्ति के

मामले में किसी से भरण–पोषण नहीं लिया जा सकता। लेकिन मैंने यह अधिनियम बहुत ही गहराई से पढ़ रखा था। मुझे लगा कि कहीं कोई गड़बड़ हो रही है। मृतक के आश्रितों को भरण–पोषण मिल सकता था। उसी रात मैंने इस अधिनियम पर दोबारा नजरें दौड़ाई तो चेहरे पर चमक आ गई। अधिनियम में साफ लिखा था – 'बेची हुई सम्पत्ति पर भरण–पोषण का अधिकार नहीं मिल सकता। लेकिन अगर खरीदने वाले व्यक्ति को इस बात का पता है कि उसी सम्पत्ति से बेचने वाले के आश्रितों का गुजारा होता है, तो उसे वह सम्पत्ति खरीदने पर आश्रितों को भरण–पोषण देना होगा। मुझे लगा कि बात बन गई। पूरा शहर इस बात को जानता था कि मरने वाले में कुछ गलत आदतें थी और वह अपनी सारी कमाई व्यसनों में खर्च कर देता था। उस सम्पत्ति की बदौलत ही उस व्यक्ति के आश्रित अपना पेट भर पा रहे थे। यह सब जानते हुए भी उस सम्पत्ति को खरीदा गया। मतलब साफ था–'वह व्यक्ति फंस गया और उसे मृतक के आश्रितों को भरण–पोषण की सुविधा देने पर विवश होना पड़ा।

इस अधिनियम में साफ लिखा है कि अगर किसी व्यक्ति के पास पर्याप्त साधन है, तो उसे अपनी पत्नी, संतान और माता–पिता के भरण–पोषण का निर्वाह करना होगा। बशर्ते कि उनके पास भरण–पोषण का अन्य कोई साधन न हो। उसे अपनी जायज या नाजायज संतान, चाहे वह विवाहित हो या न हो, अगर शारीरिक या मानसिक असमर्थता के कारण अपना भरण–पोषण नहीं कर पा रही तो पिता को उसका भरण–पोषण करना होगा। अगर पुरूष अपनी ऐसी संतान, पत्नी, माता–पिता का भरण–पोषण नहीं करता। तो वे प्रथम श्रेणी मैजिस्ट्रेट की अदालत में अपना हक मांग सकते हैं। अगर भरण–पोषण का जिम्मेवार व्यक्ति न्यायालय के आदेश की अवहेलना करता है, तो उसका वारंट जारी हो सकता है और जेल भेजा जा सकता है।

अभी तक आपने पढ़ा कि हिंदू कोड बिल के उन चार अधिनियमों के बारे में जिनसे महिलाएं सशक्त होकर उभरीं। ये अधिनियम थे हिंदू विवाह अधिनियम 1955, हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956ए हिंदू नाबालिग एवं संरक्षकता अधिनियम, 1956 तथा हिंदू दत्तक ग्रहण एवं भरण पोषण अधिनियम 1956।

अब जानते हैं कि इन अधिनियमों का महिलाओं को कितना लाभ मिला है।

मैं समझता हूं कि इन अधिनियमों के लागू होने से भारतीय हिंदू महिलाओं की स्थिति में दिन और रात का फर्क आया है। महिलाओं ने हिंदू जीवन के पारंपरिक सिद्धांतों को नकारने का कड़ा प्रयास किया। इतना ही नहीं, उन्होंने एक चुनौती भी पेश की है। उनकी सामाजिक स्थिति तो सुधरी ही है, साथ में उन्हें आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्र में भी आगे बढ़ने का अवसर मिले हैं। उनकी अनेक समस्याओं का निदान भी हुआ है। आइए, उन परिवर्तनों को समझने का प्रयास करते हैं।

भारत में महिला साक्षरता की स्थिति

1951	8.86 प्रतिशत
1961	15.34 प्रतिशत
1971	21.97 प्रतिशत
1981	29.75 प्रतिशत
1991	39.29 प्रतिशत
2001	55.00 प्रतिशत लगभग
2011	65.46 प्रतिशत

समझा जा सकता है कि आजादी के बाद महिलाओं की साक्षरता की दर में लगातार उल्लेखनीय बढ़ोतरी दर्ज हुई है। इस प्रगति को देखते हुए जाने–माने शिक्षाविद् केएम पन्निकर ने कहा है–'स्त्री शिक्षा ने विद्रोह की उस कुल्हाड़ी की धार तेज कर दी है, जिससे हिंदू सामाजिक जीवन की जंगली झाड़ियों को साफ करना सम्भव हो गया है।'

आर्थिक जीवन में स्वतंत्रता

यह सच है कि हिंदू समाज के अधिकांश लोग आज भी रूढ़िवादी हैं और महिलाओं की आर्थिक स्वतंत्रता के खिलाफ हैं। वे नहीं चाहते कि महिलाएं आर्थिक तौर पर स्वतंत्र बनें और घर से बाहर निकलकर पैसे कमाएं। लेकिन यह भी सच है कि आजादी के बाद शिक्षा, औद्योगीकरण, नवीन विचारधारा और पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण पुरूषों पर स्त्रियों की आर्थिक निर्भरता लगातार कम होती चली गई।

आजादी से पहले भी हालांकि कुछ महिलाएं नौकरी करती थीं या अपना व्यापार करती थीं, लेकिन उनकी संख्या सीमित थी तथा उनका रोजगार प्रतिष्ठा की दृष्टि से हीन समझा जाता था। लेकिन अब स्थिति लगातार बदलती जा रही है। अब बड़ी संख्या में उच्च और मध्यम वर्ग की महिलाएं भी निश्चित होकर अपना व्यवसाय या नौकरी करने लगी हैं। उनकी मनोवृत्ति में भी तेजी से बदलाव हुआ है। उनका मनोबल बढ़ा है, जिससे उन्हें आर्थिक स्वतंत्रता मिलती जा रही है।

पारिवारिक अधिकारों में वृद्धि

आजादी मिलने के बाद महिलाओं की पारिवारिक स्थिति और उनके अधिकारों में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन नजर आने लगे हैं। आजादी से पहले जहां पुरूष महिलाओं को पैर की जूती समझता था, वहीं अब स्त्री पुरूष की परम सहयोगी, सहचरी और मित्र बन गई है। अब महिलाएं अपने परिवारों में एक प्रबंधक की तरह दिखाई देती हैं, न कि दासी की तरह। शिक्षित स्त्रियां बहुत कम शोषित हो रही हैं। उन्हें अपने अधिकार प्रायः बलिदान नहीं करने पड़ रहे। जब भी स्त्री को लगा है कि संयुक्त परिवारों में उसके अधिकारों का हनन हो रहा है तो उसने एकल परिवार बसाने का प्रयास किया है ताकि उसे अधिक से अधिक अधिकार मिल सकें। वह अब अंतरजातीय विवाह करने लगी है तथा अपना कैरियर बनाने के लिए भी परिश्रम करने लगी है।

राजनीतिक अधिकारों में वृद्धि

आजादी के बाद महिलाएं राजनीति में भी तेजी से उभर रही हैं। इसे एक सुखद आश्चर्य ही कहा जाएगा कि वे चुनाव जीतकर लोकसभा, राज्यसभा, विधानसभा और पंचायतों में पहुंच रही हैं। वे सरपंच, प्रधान और प्रमुखों के पद तक पहुंच गई है। इतिहासकार व शिक्षाविद् केएम पन्निकर के अनुसार–'कुछ मेधावी स्त्रियों ने जो उल्लेखनीय सफलता प्राप्त की है, वह भारत के लिए उतनी महत्व की नहीं हैं, जितनी कि यह बात कि कट्टरपंथी एवं पिछड़े समझे जाने वाले ग्रामीण व्यक्तियों के विचारों में अब परिवर्तन होने लगा है। यहां स्त्रियां उन सामाजिक बंधनों से बहुत मुक्त हो चुकी है, जिन्होंने उन्हें रूढ़ियों और 'बाबा वाक्य प्रमाण' की विचारधारा के द्वारा जकड़ रखा था।'

इस प्रकार समझा जा सकता है कि आजादी के बाद महिलाओं की स्थिति में लगातार सुधार हुआ है। वे सशक्त होकर लगातार उभरी रही हैं तथा देश व समाज के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दे रही हैं।

नहीं बदलती महिलाओं की स्थिति

इतना सब कुछ होने के बावजूद पूरे भारत में महिलाओं की स्थिति बहुत अच्छी नहीं हो पा रही है। इसे भारतीय नारी का दुर्भाग्य ही कहा जाना चाहिए कि एक तरफ जहां उसे देवी बनाकर पूजा जाता है, तो दूसरी ओर सेविका बनाकर आज भी अनेक स्थानों पर शोषण किया जाता है। आज के बहुत पहले दक्षिण के मंदिरों में **देवदासी प्रथा** का खूब प्रचलन था। तब नारी को पत्थर की मूर्तियों की भेंट चढ़ाया जाता था और अंत में वेश्यालयों में बेच दिया जाता था। यह न समझें कि यह प्रथा पूरी तरह से समाप्त हो चुकी है।

आज भी दक्षिण भारत में कुंआरी कन्याओं का विवाह पूर्व मंदिरों में किया जाता है तथा उनका पण्डों द्वारा शोषण होता है। यह सभ्य समाज के माथ पर कलंक ही है। पुरूष अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए नारी का उपयोग एक वस्तु की तरह करता है। यह जानकर दुःख होता है कि कभी अतिथि को देवता समझकर भोजन और मदिरा की तरह रात को कुंआरी कन्या को उसे सौंप दिया जाता था। मुझे लगता है कि इन सब के पीछे पुरूष की कामुक भावना और चतुराई काम करती रही। स्त्री के खून में यह भावना, संस्कार की कूट–कूटकर भर दिए गए कि वह सिर्फ और सिर्फ शरीर है।

मुझे साहित्य में बचपन से ही रूचि रही है। इसलिए याद है कि एक जगह महाकवि सुमित्रानंदन पंत ने बड़े दुख से लिखा है– 'योनि मात्र रह गई मानवी।' और 'कंकाल' उपन्यास में जाने–माने साहित्यकार जयशंकर प्रसाद ने स्वीकार किया है कि– 'पुरूष नारी को उतना ही शिक्षा देता है, जितनी उसके स्वार्थ में बाधक न हो।' तभी तो कन्याओं को जन्म लेते ही मार दिया जाता था। सच्चाई यह है कि अब विज्ञान भी– 'औरत को मारने के तथा उसे जड़ से मिटाने के नित नए तरीके ईजाद करता जा रहा है। यदि भ्रूण को ही मार दिया जाए तो शिशु को मारने की नौबत नहीं आएगी।' तमाम आंदोलनों और सुधारों के बावजूद आज भी महिलाएं उपेक्षित महसूस कर रही हैं। एक डर, भय और आशंका की परछाई उनके चेहरे पर नाच रही है।

बेटियों की हत्या

आज कन्या हत्या भ्रूण हत्या का दंश अपनी जगह है। कहते हैं कि हमारे प्राचीन समाज में बेटियों को टेंटुआ दबाकर मार दिया जाता था। मैं कहता हूं, मार दिया जाता था नहीं, आज भी मार दिया जाता है। बिहार, राजस्थान, मध्यप्रदेश और उत्तरप्रदेश के अपने स्थानों पर बेटी का जन्म होते ही, उसे पैदा करवाने वाली दाई कुछ अतिरिक्त पैसा लेकर नवजात का गला दबाकर, उसे आक का दूध पिलाकर, धान की भूसी मुंह में डालकर या सुतली गले में लपेटकर, उसे मरोड़कर अथवा सर्दी के दिनों में गीला कपड़ा लपेटकर बच्ची की जान ले लेती हैं। स्पष्ट है कि जमाना चाहे बदल गया, आजादी बेशक मिल गई, लेकिन बहुत से पुरूष आज भी नहीं चाहते कि स्त्री उसके समकक्ष हो। मुझे तो औरतों पर लगी पाबंदियां कई जगह ज्यों की त्यों दिखाई देती हैं। पुरूष जहां–तहां मुंह मारता फिरे, प्रेम का नाटक करता फिरे या फिर अनेक शादियां, उसका बहिष्कार नहीं किया जाता। उसे प्रताड़ित नहीं किया जाता। दूसरी तरफ अगर और गलती से भी ऐसा कर दे तो उसे कुलटा और कमरजली कहा जाता है। औरत यदि अपना जीवन अपने अनुसार बिताना चाहे तो सारे नियम बदल जाते हैं। पुरूष आज भी उसकी विवशता का लाभ उठाने से बाज नहीं आता।

आखिर क्यों हो रहा है ऐसा

माना कि स्त्री लगातार शिक्षित होती जा रही है। इसके बावजूद उसे उसके अधिकार नहीं मिल पा रहे। ससुराल में उसे आज भी प्रताड़ित किया जाता है। वह आज भी परिवार के निकटतम सम्बंधियों तक की हवस का शिकार हो जाती है। दहेज, छेड़छाड़, बलात्कार, घरेलू हिंसा व तरह–तरह की प्रताड़ना की वह आज भी शिकार हो रही है। सोचने का विषय है कि ऐसा क्यों हो रहा है। जब कानून उनके पक्ष में हैं, उसे कानूनन उसके अधिकार मिल चुके हैं तो वह आखिर किसलिए उपेक्षित व प्रताड़ित है।

मैं इसका एक ही कारण मानता हूं और वह है जागरूकता का अभाव। किताबी शिक्षा तो नारी प्राप्त कर रही है, लेकिन अपने अधिकारों और कानून के बारे में वह आज भी अशिक्षित है। इस पुस्तक को लिखने का मुख्य कारण यही है कि महिलाओं को उनके अधिकारों व कानून के बारे में बताया जाए, जागरूक किया जाए और सही मायनों में सशक्त बनाया जाए।

अभी तक आप पढ़ रहे थे केवल हिंदू महिलाओं के बारे में। मुस्लिम व इसाई महिलाओं के सम्बंध में हम आगामी अध्यायों में पढ़ने जा रहे हैं।

साभार
महिलाएं समझे अपने कानूनी अधिकार
(पृ.सं. 37 से 56 तक)
जे.के.वर्मा

बुद्ध धर्म और ब्राह्मण धर्म का संघर्ष

पुराने वैदिक धर्म में क्रांतिकारी परिवर्तन लाकर बुद्ध ने अपना धर्म निर्मित किया यह सर्व विदित है और एक समय में संपूर्ण भारत बौद्ध था, किन्तु प्रतिक्रांति हुई, ब्राह्मण धर्म ऊपर उठा और बुद्ध का धर्म बुद्ध के जन्मभूमि में ही पतन हो गया। बौद्ध भिक्षु मारे गये, बचे खुंचे को देश छोड़ कर भागना पड़ा। जाते वक्त कुछ बौद्ध वाड्.मय वे साथ ले गए। बौद्ध ग्रंथ देश से अदृश्य हो गये, जब पाश्चात्प विद्वानों ने बौद्ध ग्रंथों की खोज करना चाहा तो कोई ग्रंथ नहीं मिले, केवल एक अपवाद था – केरल में मंजुश्री मूल कल्प मिला। बौद्ध ग्रंथों के अभाव पर श्री चौधरी का कथन है :–

''जिस भू–भाग में बुद्ध धर्म और जैनधर्म के दार्शनिक सिद्धान्त करीब तीन शताब्दी तक ऐश्वर्यवान रहे। वहां वाड्.मय का अभाव होगा ऐसा सोचा भी नहीं जा सकता। शायद अति उत्साही हिंदुओं द्वारा वाड्.मय नष्ट किया गया''।

तब भी, बौद्ध सिद्धांत रीतिरिवाज, प्रथाएं जो जनसामान्य में प्रचलित थी, वे कुछ भ्रष्ट स्वरूप में वैसी ही बनी रही और आज भी कई जन समूहों में दिखाई देती हैं, बौद्ध पवित्र पूजा स्थल, मंदिर, मठ विहार संघाराम आदि जो भिक्षुओं द्वारा त्याग दिये थे उनके खंडहर बन गये, किन्तु सब नहीं, उनमें से जो प्रमुख थे उन पर ब्राह्मणों ने कब्जा कर लिया और ब्राह्मणीय पूजा के लिए रूपवांतरित कर लिया, कई विद्वानों ने यह बताया हैं कि पूरी के जगन्नाथ, बद्रीकेश्वर के नारायण और महाराष्ट्र में पंढ़रपुर के विठोब एक वक्त बौद्ध थे, किन्तु हमारी जानकारी में , अब तक किसी ने नहीं बताया कि तिरूपती के वेंकटेश्वर, जो दक्षिण भारत में प्रसिद्ध स्थान है, और उत्तर में भी बालाजी नाम से विख्यात है, एक वक्त बौद्ध देवता थे, और वह बौद्धों का पवित्र स्थान था, बुद्ध धर्म के पतन के वक्त उसका कब्जा ब्रह्मणीय धर्मों ने लिया। इस लिखान का उददेश्य यह बताना है कि यह प्रसिद्ध तिरूपति क्षेत्र, जो अब विष्णु क्षेत्र हैं, एक जमाने में बौद्ध क्षेत्र था।

ब्राह्मण धर्म पर बौद्ध धर्म के परिणाम, जो आज भी दिख पड़ते।

आज का हिन्दु धर्म जो है उस पर बौद्ध धर्म का असीम प्रभाव है और उसके अवशेष आज भी स्पष्ट दिखतें हैं, यह बात कहने की जरूरत नहीं है, इस विषय में विद्वानों का क्या दृष्टीकरण है यह हम देखेंगे, श्री लालमणी जोशी का कथन कुछ इस प्रकार है :

'' स्वामी विवेकानन्द अपने भाषणों में तथा लिखानों में बार–बार हिन्दु धर्म पर बौद्ध प्रभाव का उल्लेख करते हैं, उनका कहना है कि, 'अर्वाचीन हिन्दु धर्म ज्यादातर पौराणिक है, अर्थात बौद्ध धर्म के पश्चात उदित हुआ है' उन्होंने बताया कि मदिरा सेवन तथा यज्ञों में और खाने में प्राणियों की हिंसा करना इन प्रथाओं को कम करने या बंद करने में बौद्ध धर्म ही मुख्यतः जबाबदार हैं, हिन्दुओं की मूर्तियों तथा मंदिरों का उद्गम उन्होंने बौद्ध पद्धति से बताया वह सुयोग्य है। बौद्ध धर्म और वैष्णव धर्म के विषय में उन्होंने कहा कि, ''बौद्ध धर्म और वैष्णव धर्म ये दो अलग अलग चीजे नहीं हैं। बुद्ध धर्म के पतन के समय, हिन्दु धर्म ने कुछ प्रमुख धर्मतत्व बौद्ध धर्म के लिए और उन्हें अपनाया और इन्ही तत्वों को अब वैष्णव धर्म कहते हैं। '' यह बात लक्षणिय है कि, वैष्णव धर्म केवल कुछ प्रमुख धर्मतत्वों का आचरण मात्र नहीं है। स्वामी विवेकानन्द संक्षेप में उन सब नीति तत्वों का तथा प्रथा, रीति, रिवाज, आचरणों का उल्लेख कर रहे हैं, जैसे कि अहिंसा, करूण , मैत्री, गुरू के पति सम्मान, मानसिक एवं वासनाओं का नियंत्रण, योग आदि जो कि बौद्ध धर्म ने वैष्णव धर्म को दिया। बोधीसत्व का आदर्श तथा बुद्धावतार की कल्पना भी वैष्णव धर्म का अभिन्न अंग बन गया''।

बौद्धों के केवल आदर्श और नीतितत्व ही ब्राह्मणों ने नहीं उठाये किन्तु मंदिर भी अपना लिये।

आदर्श और नीतितत्व जो ब्राह्मणों ने हिन्दु धर्म को सशक्त बनाने और ऊपर उठा कर खड़ा करने हेतु बुद्ध धर्म से अपनाये हैं, इस विषय में लालमणी जोशी आगे कहते हैं :

'' बौद्ध भिक्षुओं के आदर्शों एवं संस्थाओं के बारे में, स्वामी विवेकानन्द ने कहा कि मठों में दीक्षा तथा सन्यास ग्रहण का धर्मोपदेश संपूर्ण भारत में बुद्ध के पश्चात ही शुरू हुआ और हिन्दु धर्म ने बौद्धों की सन्यास ग्रहण की भावना को अपना लिया। काषाय वस्त्रों को हिन्दु धर्म में भी स्थायी आश्रय मिला। हिन्दु आचार्यों ने केवल बौद्धों की भिक्षु संस्था को ही स्वीकार नहीं किया, बल्कि, उन्होंने बौद्ध मठ विहार आदि पर भी अधिकार जमाया। आज जो अनेकानेक मठ भारत में आप देख रहे हैं। जिनमें सन्यासी बसे हैं, एक वक्त बौद्धों की सम्पत्ति थी। हिंदुओं ने केवल उनको अपने हिसाब से परिवर्तन करके आज अपना लिया है। सच बात तो यह है कि सन्यास लेने के व्यवस्था का उद्गम ही बुद्ध से हुआ। स्वामी विवेकानन्द ने अंतिम निष्कर्ष के तौर पर कहा कि, हिन्दु धर्म इतना जो महान बना वह केवल बुद्ध के तत्वों का अंगीकार करने से ही बना। स्वामी विवेकानन्द अर्वाचिन हिंदु धर्म के एक प्रधान व्यक्ति रहे हैं और उनके मत लिखे पढ़े हिंदुओं के मत को दर्शाते हैं ''।

सामाजिक परिस्थितियों पर भी बुद्ध धर्म का प्रभाव रहा।

इस देश की सामाजिक परिस्थितियों पर बुद्ध धर्म का क्या प्रभाव पड़ा और स्त्रियों तथा शूद्रों पर क्या परिणाम हुआ, इस विषय में श्री लालमणी जोशी कहते हैं :

'' सामाजिक जीवन पर बौद्ध धर्म ने कई प्रकार से गहरा आद्यात किया, उसके नेता तथा आचार्य बार बार जाति पद्धति की आलोचना करते रहे और जाति तथा वर्ण पर आधारित झूठे वर्चस्व की भावना की खिल्ली उड़ाते रहे । दूसरी तरफ ऊंचे धार्मिक जीवन तथा उच्चतम धार्मिक लक्ष्य की ओर, जिसने भी चाहा उन सब के लिए बौद्ध धर्म के द्वार खोल दिए। समाज के निच माने गये, जातियों के लिए भी हालांकि जाति पद्धति का विरोध किया और जातिपद्धति के बुराईयों की बार–बार समाज को शिक्षा दी। बुद्ध धर्म के सामाजिक योगदान का दूसरा पहलु था– स्त्रियों पर लगाई गयी सामाजिक पांबदियों से उन्हें मुक्त करना। धार्मिक संस्कृति में स्त्रियों को बौद्धों ने, जैनो ने समान किन्तु ब्राह्मणों से विपरीत समानता की संधि उपलब्ध कराई। इतिहास को ज्ञात सर्वप्रथम आंरभिक भिक्षुणों संघ की सदस्या बौद्ध थेरीयाँ ही थी। उनकी धार्मिक कविताएँ हम तक थेरी गाथा द्वारा पहुंची हैं, जैसे कि खेमा, पटाचार, धम्मदीना, शुभ, किसा, सुजाता, विशाखा, सामवती, आम्ब्रपाली, उप्लमन्ना तथा सोमा आदि, जिससे भारतीय समाज में नारी के उत्थान के लिए बौद्ध धर्म ने महान कार्य किया था यह बात स्पष्ट रूप से दिखती हैं। शूद्रों के उत्थान में बौद्धों के योगदान के बारे में भी यही बात सच है ''।

बौद्ध जन सामान्यों का क्या हुआ ?

बौद्ध भिक्षुओं का क्या हुआ, ग्रंथों का क्या हुआ, मंदिरों का क्या हुआ ये हमने देखा तथा बौद्ध विचारों को कैसे हिंदु पद्धति में अपनाया गया यह भी हमने देखा। किन्तु बौद्ध धर्म के पश्चात बौद्ध जन सामान्य जो कि भारतीय समाज मे बहुसंख्यक थे, उनका क्या हुआ ? डा0 अम्बेडकर ने स्पष्ट रूप से पहले ही बताया था कि बौद्धों में से कई लोगों को अछूत बनाया गया। हमारी ऐसी मान्यता है कि यदि कुछ सुयोग्य अध्ययन किया जाये तो अब भी यह मुमकिन है कि ऐसे जन समूहों की पहचान हो सके जो हिन्दु बन गये हैं। लालमणी जोशी ने कुछ छोटे–छोटे समूहों की पहचान की है :

'' विद्वानों ने इस बात की ओर ध्यान दिलाया कि धर्मठाकुर सम्प्रदाय कुछ नीची जाति के लोगों में प्रचलित हैं, जैसे कि डोम, हादी, मच्छीमार, बढ़ई आदि ब्राह्मणीय सामाजिक व्यवस्था में ये जतियाँ शूद्र मानी जाती है। एस.बी. दासगुप्ता इनके धर्म का वर्णन करते हैं– '' परवर्ती बौद्ध विचार एवं प्रथाएं और अनार्य आदिवासियों के प्रचलित हिंदू विचार इनका मिश्रण। '' उनके अनुसार '' धर्म संप्रदाय के कुछ घटक परवर्ती कालीन बौद्ध धर्म के लिए हैं, जिसे मंत्रयान और बाद में वज्रयान के नाम से जाना जाता था। उनका विचार है कि धर्म ठाकुर सम्प्रदाय पर कुछ मुस्लिम प्रभाव हैं और वैसी ही बंगाल के मुस्लिमों पर बौद्ध प्रभाव है।''

तब भी हमारी मान्यता है कि आज के हिन्दु के जनसंख्या के कई और बड़े तथा महत्वपूर्ण समूह पहले बौद्ध थे इसकी पहचान की जा सकती है, नागेन्द्रनाथ बसु ने मयुरभंज के जंगली इलाकों का अन्वेषण किया और उन्होंने पाया कि वहां के लोग बौद्ध थे, नगेन्द्रनाथ बसु के पुस्तक के 1911 ई0 में प्रस्तावना लिखते वक्त डॉ0 हरप्रसाद शास्त्री ने आज की जनसंख्या में कुछ ऐसे जन समूहों की पहचान की है जो पहले बौद्ध थे। इनमें जिनका उल्लेख उन्होनें किया है उनमें हैं– गोरखनाथ के अनुयायी, धर्मगढ़ीया योगी, बहुत से गुप्ता, वैद्यकार, सुनार, बढ़ई, चित्रकार, बंगाल का व्यापारी वर्ग, कायस्थों में लगभग सभी सोनार बनिया, वैष्णव सहजीया आदि।

संदर्भ : तिरूपति बालाजी एक प्राचीन बौद्ध क्षेत्र, डॉ. के. जमनादास।

साभार : बहुजनों का बहुजन भारत

रविवार 20 मई 2007 वर्ष 6 अंक 19

सेवा में,

नाम .....

पता .....

.....

.....